शुद्धि-पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	६	अदि	आदि
३	१	नामि	नाभि
३	१६	तायतीसग	तायत्तीसग
१२	२१	नीच	नीचा
१८	१	वभार	वैभार
१८	१	पर्बत	पर्वत
२०	१५	तायतिसक	तायत्तीसग
३३	२२	हुए.	हुए
४६	१०	असंस्यातवें	असंख्यातवें
४८	३	अवड्डिया	अवट्ठिया
४६	४	अवड्डिया	अवट्ठिया
५३	६	निर्वल	निर्बल
५५	१	दुवर्णादि	दुर्वर्णादि
६२	२	वेदनोय	वेदनीय
६३	११	सूक्ष्म	सूक्ष्म
६८	१६	कषयी	कषायी
७१	१०	जीब	जीव
७८	१८	भतभीत	भयभीत
७६	१३	वाह्य	बाह्य
६०	४	व	
६६	१८	किये	कि ये
१०१	६	अपच्चवक्खाणी	अपच्चक्खाण
११३	२१	वे	के
११७	२	?	१

अनुक्रमणिका



(थोकड़ा नं० ३३)

श्री भगवतीजी सूत्र के तीसरे शतक के पहले उद्देशे में 'देव देवी वैक्रिय करने यावत श्री अग्नि-भूतिजी वायुभूतिजी की पूच्छा (पृच्छा)' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं--

१—देवतामें ५ बोल पाते हैं-*इन्द्र, सामानिक, तायत्तीसग (त्रायस्त्रिंशक), लोकपाल, अग्रमहिषी देवियाँ। वाणव्यन्तर

---

*(१) इन्द्र—देवों के स्वामी को इन्द्र कहते हैं।

(२) सामानिक—जो ऋद्धि आदि में इन्द्र के समान होते हैं किन्तु जिनमें सिर्फ इन्द्रपना नहीं होता, उन्हें सामानिक कहते हैं।

(३) तायत्तीसग—(त्रायस्त्रिंशक) जो देव मन्त्री और पुरोहित का काम करते हैं वे तायत्तीसग कहलाते हैं।

(४) लोकपाल—जो देव सीमा की रक्षा करते हैं, वे लोकपाल कहलाते हैं।

(५) अग्रमहिषी देवी—इन्द्र की पटरानी अग्रमहिषी देवी कहलाती है।

और ज्योतिषी देवों में तायत्तीसग और लोकपाल नहीं होते हैं, शेष तीन बोल (इन्द्र, सामानिक, अग्रमहिषी) होते हैं। ये सब ऋद्धि परिवार से सहित होते हैं। आवश्यकता पड़ने पर वैक्रिय करके देवता देवी के रूप बना सकते हैं।

२—अहो भगवान् ! वैक्रिय करके कितना क्षेत्र भरने की इनमें शक्ति है ? हे गौतम*(अग्निभूति) ! †जुवती जुवाण के

---

*१ इन्द्रभूति २ अग्निभूति ३ वायुभूति ये तीनों सगे भाई और गौतम गोत्री होने से तीनों को गौतम करके बोलाया है।

†शास्त्र में यह पाठ है—

से जहाणामए जुवइं जुवाणे हत्थेणं हत्थे गिण्हेज्जा, चक्कस्स वा णाभी अरगा उत्ता सिया।

अर्थ—जैसे जवान पुरुष काम के वशीभूत होकर जवान स्त्री के हाथ को मजबूती से अन्तर रहित पकड़ता है, जैसे गाड़ी के पहिये की धुरी आराओं से युक्त होती है इसी तरह देवता और देवी वैक्रिय रूप करके जम्बूद्वीप को ठसाठस भर सकते हैं।

कोई आचार्य उपरोक्त पाठ का अर्थ इस तरह से करते हैं—

जहाँ बहुत से लोग इकट्ठे होते हैं ऐसे मेले में जवान पुरुष जवान स्त्री का हाथ पकड़ कर चलता है। इस तरह से जवान पुरुष के साथ चलती हुई भी जवान स्त्री पुरुष से अलग दिखाई देती है। इसी तरह वैक्रिय किये हुए रूप मूल रूप से (वैक्रिय करने वाले से) संयुक्त होते हुए भी अलग अलग दिखाई देते हैं।

जैसे बहुत से आराओं से युक्त धुरी घन होती है और उसके बीच में पोलार बिलकुल नहीं रहती। इसी तरह से वैक्रिय किये हुए रूप

दृष्टान्त से तथा आरा नाभि के दृष्टान्त से दक्षिण दिशा के चमरेन्द्रजी सम्पूर्ण जम्बूद्वीप को भर देते हैं। तिरछा असंख्याता द्वीप समुद्र भरने की शक्ति है (विषय आसरी), किन्तु कभी भरे नहीं, भरते नहीं और भरेंगे नहीं।

उत्तर दिशा के बलीन्द्रजी जम्बूद्वीप झाझेरा (कुछ अधिक) जितना क्षेत्र भर देते हैं। तिरछा असंख्याता द्वीप समुद्र भरने की शक्ति है (विषय आसरी), किन्तु कभी भरे नहीं, भरते नहीं और भरेंगे नहीं।

जिस तरह असुरकुमार के इन्द्र का कहा उसी तरह उनके सामानिक और तायत्तीसग का भी कह देना चाहिये। लोकपाल और अग्रमहिषी की तिरछा संख्याता द्वीप समुद्र भरने की शक्ति है (विषय आसरी), किन्तु कभी भी भरे नहीं, भरते नहीं, भरेंगे नहीं।

नवनिकाय के देवता, वाणव्यन्तर और ज्योतिषी देवता एक जम्बूद्वीप भर देते हैं। तिरछा संख्याता द्वीप समुद्र भरने की शक्ति है (विषय आसरी), किन्तु कभी भरे नहीं, भरते नहीं, भरेंगे नहीं।

पहले देवलोक के पांचों ही बोल (इन्द्र, सामानिक, तायत्तीसग, लोकपाल, अग्रमहिषी) दो जम्बूद्वीप जितना क्षेत्र भर

मूल रूप से प्रतिबद्ध रहते हैं। ऐसे वैक्रिय रूप करके जम्बूद्वीप को ठसाठस भर देते हैं।

देते हैं। दूसरे देव लोक के देव, दो जम्बूद्वीप झाझेरा, तीसरे देवलोक के देव ४ जम्बूद्वीप, चौथे देवलोक के देव ४ जम्बूद्वीप झाझेरा, पांचवें देवलोक के देव ८ जम्बूद्वीप, छठे देवलोक के देव ८ जम्बूद्वीप झाझेरा, सातवें देवलोक के देव १६ जम्बूद्वीप, आठवें देवलोक के देव १६ जम्बूद्वीप झाझेरा, नवमें दसवें देव लोक के देव ३२ जम्बूद्वीप, ग्यारहवें बारहवें देवलोक के देव ३२ जम्बूद्वीप झाझेरा क्षेत्र भर देते हैं और शक्ति (विषय आसरी) असंख्याता द्वीप समुद्र भरने की है किन्तु कभी भरे नहीं, भरते नहीं और भरेंगे नहीं।

पहले दूसरे देवलोक के इन्द्र, सामानिक और तायत्तीसग इन तीन की तिरछा असंख्याता द्वीप समुद्र भरने की शक्ति है और लोकपाल तथा अग्रमहिषी की तिरछा संख्याता द्वीप समुद्र भरने की शक्ति है। तीसरे देवलोक से बारहवें देवलोक तक सब की (इन्द्र, सामानिक, तायत्तीसग, लोकपाल, अग्रमहिषी) तिरछा असंख्याता द्वीप समुद्र भरने की शक्ति है (विषय आसरी) किन्तु कभी भी भरे नहीं, भरते नहीं और भरेंगे नहीं।

गाथा—

छट्ठट्ठम मासो उ अद्धमासो वासाइं अट्ठ छम्मासा।
तीसय कुरुदत्ताणं तवभत्त परिण्णा परियाओ॥
उच्चत्त विमाणाणं पाउब्भव पेच्छणा य संलावे।
किंचि विवादुप्पत्ती, सणंकुमारे य भवियत्तं॥

अर्थ—श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के शिष्य तिष्यक अनगार ८ वर्ष दीक्षा पाल कर बेले बेले तपस्या करके एक मास का संलेखना संथारा करके आलोयणा करके काल के अवसर काल करके प्रथम देवलोक के तिष्यक विमान में शक्रेन्द्रजी का सामानिक देव हुआ। महाऋद्धिवंत हुआ। इनकी वैक्रिय शक्ति शक्रेन्द्रजी के माफिक है।

श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के शिष्य कुरुदत्त अनगार ने छह मास दीक्षा पाली। तेले तेले तपस्या करते हुए सूर्य की आतापना ली। अर्द्ध मास की संलेखना संथारा करके आलोयणा करके काल के अवसर काल करके दूसरे देवलोक में कुरुदत्त विमान में ईशानेन्द्रजी का सामानिक देव हुआ। महा ऋद्धिवंत हुआ। इनके वैक्रिय की शक्ति ईशानेन्द्रजी के समान है।

शक्रेन्द्रजी के विमान से ईशानेन्द्रजी का विमान करतल (हथेली) के दृष्टान्त माफक कुछ ऊंचा है और शक्रेन्द्रजी का विमान उससे कुछ नीचा है। कोई काम हो तो ईशानेन्द्रजी शक्रेन्द्रजी को बुलाते हैं तब शक्रेन्द्रजी ईशानेन्द्रजी के पास दूसरे देवलोक में जाते हैं। ईशानेन्द्रजी बुलाने पर अथवा बिना बुलाने पर ही पहले देवलोक में शक्रेन्द्रजी के पास जाते हैं। इसी तरह बातचीत सलाह मशविरा कामकाज करते हैं। किसी समय शक्रेन्द्रजी और ईशानेन्द्रजी दोनों में परस्पर कोई विवाद पैदा हो जाय तब वे दोनों इन्द्र इस तरह विचार करते

हैं कि सनत्कुमारेन्द्रजी (तीसरे देव लोक के इन्द्र) आवें तो अच्छा हो। तब सनत्कुमारेन्द्रजी का आसन चलायमान होता है। वे आकर दोनों इन्द्रों को समझा देते हैं, उनका विवाद मिटा देते हैं। सनत्कुमारेन्द्रजी साधु साध्वी श्रावक श्राविका इन चार तीर्थ के बड़े हितकारी सुखकारी पथ्यकारी अनुकम्पक (अनुकम्पा करने वाले) हैं। निःश्रेयस् (कल्याण) चाहने वाले, हित सुख पथ्य चाहने वाले हैं ❀। इसलिये वे भवी, समदृष्टि, सुलभबोधी, परित्तसंसारी, आराधक, चरम हैं। सनत्कुमारेन्द्रजी की स्थिति ७ सागरोपम की है। वहाँ से (देवलोक से) चव कर महाविदेह क्षेत्र में जन्म लेकर सिद्ध बुद्ध मुक्त होवेंगे यावत् सब दुःखों का अन्त करेंगे।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ३४)

श्री भगवतीजी सूत्र के तीसरे शतक के दूसरे उद्देशे में 'चमरेन्द्रजी के उत्पात' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! क्या असुरकुमार देव पहली रत्नप्रभा नरक के नीचे बसते हैं (रहते हैं) ? हे गौतम ! णो इणट्ठे

❀ पूर्व भव में ये चार तीर्थ (साधु साध्वी श्रावक श्राविका) के हित, सुख, कल्याण के इच्छुक थे। ऐसी धारणा है।

समट्ठे—असुरकुमार देव पहली रत्नप्रभा नरक के नीचे नहीं बसते हैं। इसी तरह असुरकुमार देव सात नरकों के, बारह देवलोक, नव ग्रैवेयक, पांच अनुत्तर विमान, जाव सिद्धशिला के नीचे बसते हैं? हे गौतम! णो इणट्ठे समट्ठे।

२—अहो भगवान्! असुरकुमार देव कहाँ रहते हैं? हे गौतम! यह रत्नप्रभा पृथ्वी एक लाख अस्सी हजार योजन की मोटाई वाली (जाडी) है। उसमें से एक हजार योजन ऊपर और एक हजार योजन नीचे छोड़ कर बीच में १ लाख ७८ हजार योजन की पोलार है। उसमें १३ पाथड़ा और १२ आन्तरा हैं। उन १२ आन्तरों में से ऊपर दो आन्तरा छोड़ कर नीचे के १० आन्तरों में दस जाति के भवनपति देव रहते हैं। तीसरे आन्तरे में असुरकुमार रहते हैं।

३—अहो भगवान्! असुरकुमारों की गति कितनी है? वे कहाँ तक जा सकते हैं? हे गौतम! नीचे सातवीं नरक तक जाने की शक्ति है (विषय आसरी), परन्तु तीसरी वालूप्रभा नरक तक गये, जाते हैं और जावेंगे। अहो भगवान्! वे तीसरी नरक तक किस कारण से जाते हैं? हे गौतम! अपने पूर्व भव के वैरी को दुःख देने के लिये और अपने पूर्व भव के मित्र को सुखी करने के लिए जाते हैं। अहो भगवान्! असुरकुमार देव तिरछी गति कितनी कर सकते हैं? हे गौतम! स्वदिशा में असंख्यात द्वीप समुद्र, परन्तु पर दिशा में नंदीश्वर द्वीप याने

हैं कि सनत्कुमारेन्द्रजी (तीसरे देव लोक के इन्द्र) आवें तो अच्छा हो। तब सनत्कुमारेन्द्रजी का आसन चलायमान होता है। वे आकर दोनों इन्द्रों को समझा देते हैं, उनका विवाद मिटा देते हैं। सनत्कुमारेन्द्रजी साधु साध्वी श्रावक श्राविका इन चार तीर्थ के बड़े हितकारी सुखकारी पथ्यकारी अनुकम्पक (अनुकम्पा करने वाले) हैं। निःश्रेयस् (कल्याण) चाहने वाले, हित सुख पथ्य चाहने वाले हैं ※। इसलिये वे भवी, समदृष्टि, सुलभबोधी, परित्तसंसारी, आराधक, चरम हैं। सनत्कुमारेन्द्रजी की स्थिति ७ सागरोपम की है। वहाँ से (देवलोक से) चव कर महाविदेह क्षेत्र में जन्म लेकर सिद्ध बुद्ध मुक्त होवेंगे यावत् सब दुःखों का अन्त करेंगे।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ३४)

श्री भगवतीजी सूत्र के तीसरे शतक के दूसरे उद्देशे में 'चमरेन्द्रजी के उत्पात' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! क्या असुरकुमार देव पहली रत्नप्रभा नरक के नीचे बसते हैं (रहते हैं) ? हे गौतम ! णो इणट्ठे

※ पूर्व भव में ये चार तीर्थ (साधु साध्वी श्रावक श्राविका)

समट्ठे-असुरकुमार देव पहली रत्नप्रभा नरक के नीचे नहीं वसते हैं। इसी तरह असुरकुमार देव सात नरकों के, बारह देवलोक, नव ग्रैवेयक, पांच अनुत्तर विमान, जाव सिद्धशिला के नीचे बसते हैं ? हे गौतम ! णो इणट्ठे समट्ठे।

२—अहो भगवान् ! असुरकुमार देव कहाँ रहते हैं ? हे गौतम ! यह रत्नप्रभा पृथ्वी एक लाख अस्सी हजार योजन की मोटाई वाली (जाडी) है। उसमें से एक हजार योजन ऊपर और एक हजार योजन नीचे छोड़ कर बीच में १ लाख ७८ हजार योजन की पोलार है। उसमें १३ पाथड़ा और १२ आन्तरा हैं। उन १२ आन्तरों में से ऊपर दो आन्तरा छोड़ कर नीचे के १० आन्तरों में दस जाति के भवनपति देव रहते हैं। तीसरे आन्तरे में असुरकुमार रहते हैं।

३—अहो भगवान् ! असुरकुमारों की गति कितनी है ? वे कहाँ तक जा सकते हैं ? हे गौतम ! नीचे सातवीं नरक तक जाने की शक्ति है (विषय आसरी), परन्तु तीसरी वालूप्रभा नरक तक गये, जाते हैं और जावेंगे। अहो भगवान् ! वे तीसरी नरक तक किस कारण से जाते हैं ? हे गौतम ! अपने पूर्व भव के वैरी को दुःख देने के लिये और अपने पूर्व भव के मित्र को सुखी करने के लिए जाते हैं। अहो भगवान् ! असुरकुमार देव तिरछी गति कितनी कर सकते हैं ? हे गौतम ! स्वदिशा में असंख्यात द्वीप समुद्र, परन्तु पर दिशा में नंदीश्वर द्वीप याने

दक्षिण दिशा के असुरकुमार देव उत्तर दिशा में नन्दीश्वर द्वीप तक गये, जाते हैं और जावेंगे। उत्तर दिशा के असुरकुमार देव दक्षिण दिशा में आठवें नन्दीश्वर द्वीप तक गये, जाते हैं और जावेंगे। इससे आगे नहीं गये, नहीं जाते हैं और नहीं जावेंगे। अहो भगवान्! नन्दीश्वर द्वीप तक किस कारण से जाते हैं? हे गौतम! तीर्थङ्कर भगवान् के जन्म, दीक्षा, केवलज्ञान और परिनिर्वाण (मोक्ष), इन चार कल्याणकों का महोत्सव करने के लिये जाते हैं। अहो भगवान्! असुरकुमार देवों की ऊंची गति कितनी है? हे गौतम! बारहवें देवलोक तक जाने की शक्ति है (विषय आसरी), परन्तु पहले देवलोक तक गये, जाते हैं और जावेंगे। अहो भगवान्! असुरकुमार देव पहले देवलोक तक किस लिये जाते हैं? हे गौतम! अपने पूर्वभव के वैरी को दुःख देने के लिए और अपने पूर्व भव के मित्र से मिलने के लिए तथा आत्मरक्षक देवों को त्रास उपजाने के लिए जाते हैं और वहाँ से छोटे छोटे रत्न लेकर एकान्त स्थान में भाग जाते हैं। तब वैमानिक देव असुरकुमार देवों को शारीरिक पीड़ा पहुँचाते हैं। अहो भगवान्! असुरकुमार देव पहले देव-लोक में जाकर क्या वहाँ की देवियों के साथ भोग भोगने में समर्थ हैं? हे गौतम! णो इणट्ठे समट्ठे (ऐसा नहीं कर सकते हैं)। असुरकुमार देव वहाँ से देवियों को लेकर वापिस अपने स्थान पर आते हैं, फिर उन देवियों की इच्छा हो तो भोग

भोगते हैं किन्तु जबरदस्ती नहीं। अनन्ती अवसर्पिणी अनन्ती उत्सर्पिणी काल बीतता है तब किसी वक्त असुरकुमार देव पहले देवलोक में जाते हैं, तब लोक में अच्छेरा (आश्चर्यकारक बात) होता है। अरिहन्त (केवली तीर्थंकर) अरिहन्त चैत्य (छद्मस्थ अरिहन्त) और भावितात्मा अनगार (साधु मुनिराज) इन तीनों में से किसी की भी नेसराय (शरण) लेकर असुर-कुमार देव पहले देवलोक में गये, जाते हैं और जावेंगे। सब असुरकुमार देव नहीं जाते हैं किन्तु मोटी ऋद्धि वाले जाते हैं। अभी वर्तमान के चमरेन्द्रजी पहले देवलोक में गये थे।

चमरेन्द्रजी का जीव पूर्व भव में इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में विन्ध्य पर्वत की तलेटी में वेभेल सन्निवेश में पूरण नाम का गाथापति था। पूरण गाथापति ने 'दानामा' नाम की प्रव्रज्या ग्रहण करके १२ वर्ष तक तापसपना पाला। अन्त में संलेखना करके काल के समय काल करके चमरचञ्चा राजधानी में इन्द्रपने उत्पन्न हुआ। तत्काल उपयोग लगा कर अपने ऊपर शक्रेन्द्रजी को देखा। उस समय श्रमण भगवान् महावीर स्वामी को दीक्षा लिये ११ वर्ष हुए थे। भगवान् सुसुमारपुर के अशोक वन खण्ड में ध्यान धर कर खड़े थे। चमरेन्द्रजी भगवान् के पास आये, वन्दना नमस्कार कर भगवान् का शरण लिया। फिर भयंकर काला रूप बना कर हाथ में परिघ रत्न नामक हथियार लेकर अनेक उत्पात करते हुए पहले देवलोक में गये

और शक्रेन्द्रजी को अनिष्ट अप्रिय वचन कहे। उन अनिष्ट अप्रिय वचनों को सुन कर शक्रेन्द्रजी क्रोध में धमधमायमान हुए। चमरेन्द्रजी को मारने के लिए वज्र फेंका। चमरेन्द्रजी डर कर पीछे भागे। ध्यान में खड़े हुए भगवान् महावीर स्वामी के पैरों के बीच में आकर बैठे। फिर शक्रेन्द्रजी ने उपयोग लगा कर भगवान् को देखा और जाना कि चमरेन्द्र भगवान् का शरण लेकर यहाँ आया था। मेरा वज्र चमरेन्द्र का पीछा कर रहा है। इसलिये कहीं मेरे वज्र से भगवान् की आशातना न हो जाय ऐसा विचार कर शक्रेन्द्रजी उतावली गति से भगवान् के पास आये और भगवान् से चार अङ्गुल दूर रहते हुए वज्र को साहरा (पीछा खींचा) भगवान् को वन्दना नमस्कार कर अपने अपराध के लिए क्षमा मांगी। फिर उत्तर पूर्व दिशा के मध्य भाग (ईशान कोण) में गये। वहाँ जाकर पृथ्वी पर तीन बार अपने डांवे पग को पटका और चमरेन्द्रजी से इस प्रकार कहा कि—हे चमर! आज तू श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के प्रभाव से बच गया है। अब मेरे से तुझको जरा भी भय नहीं है' ऐसा कह कर शक्रेन्द्रजी जिस दिशा से आये थे, उसी दिशा में वापिस चले गये (पहले देवलोक में चले गये)।

चमरेन्द्रजी भी भगवान् के पैरों के बीच से निकल कर अपनी राजधानी में चले गये। फिर अपनी सब ऋद्धि परिवार को साथ लेकर भगवान् के पास आये। भगवान् को वन्दना

नमस्कार करके नाटक बतलाया। वह ऋद्धि शरीर से निकल कर कूटागार शाला के दृष्टान्त के अनुसार वापिस शरीर में प्रवेश कर गई।

अहो भगवान् ! क्या देवता किसी पुद्गल को फेंक कर उसे वापिस ले सकते हैं ? हाँ, गौतम ! ले सकते हैं। अहो भगवान् इसका क्या कारण ? हे गौतम ! पुद्गल फेंकते समय उसकी गति शीघ्र होती है और पीछे मन्द हो जाती है और देवता की गति पहले और पीछे शीघ्र ही रहती है। इस कारण से वह फेंके हुए पुद्गल को वापिस ले सकते हैं। अहो भगवान् ! तो फिर शक्रेन्द्रजी चमरेन्द्रजी को क्यों नहीं पकड़ सके ? हे गौतम ! चमरेन्द्रजी की नीचे जाने की गति शीघ्र है और ऊपर जाने की गति मन्द है। शक्रेन्द्रजी की ऊंचे जाने की गति शीघ्र है और नीचे जाने की गति मन्द है। इस कारण से शक्रेन्द्रजी चमरेन्द्रजी को नहीं पकड़ सके।

क्षेत्र काल द्वार कहते हैं—एक समय में शक्रेन्द्रजी जितना क्षेत्र ऊपर जा सकते हैं, उतना क्षेत्र ऊपर जाने में वज्र को दो समय लगते हैं और चमरेन्द्रजी को तीन समय लगते हैं। एक समय में चमरेन्द्रजी जितना क्षेत्र नीचा जा सकते हैं, उतना क्षेत्र नीचा जाने में शक्रेन्द्रजी को दो समय लगते हैं और वज्र को तीन समय लगते हैं।

शक्रेन्द्रजी काल आसरी—एक समय में सबसे थोड़ा नीचा

क्षेत्र जाते हैं, उससे तिरछा क्षेत्र संख्यात भाग अधिक जाते हैं, उससे ऊंचा क्षेत्र संख्यात भाग अधिक जाते हैं। क्षेत्र आसरी-ऊंचा क्षेत्र २४ भाग जाते हैं, तिरछा क्षेत्र १८ भाग जाते हैं और नीचा क्षेत्र १२ भाग जाते हैं।

वज्र एक समय में सबसे थोड़ा नीचा क्षेत्र जाता है, उससे तिरछा क्षेत्र विशेषाधिक जाता है, उससे ऊंचा क्षेत्र विशेषाधिक जाता है। क्षेत्र आसरी–ऊंचा क्षेत्र १२ भाग जाता है, तिरछा क्षेत्र १० भाग जाता है, नीचा क्षेत्र ८ भाग जाता है।

चमरेन्द्रजी एक समय में सबसे थोड़ा ऊंचा क्षेत्र जाते हैं, उससे तिरछा क्षेत्र संख्यात भाग अधिक जाते हैं, उससे नीचा क्षेत्र संख्यात भाग अधिक जाते हैं। क्षेत्र आसरी–ऊंचा क्षेत्र ८ भाग जाते हैं, तिरछा क्षेत्र १६ भाग जाते हैं, नीचा क्षेत्र २४ भाग जाते हैं।

जावण काल (गमन काल) की अल्पाबहुत्व–शक्रेन्द्रजी के ऊपर जाने का काल सबसे थोड़ा, उससे नीचे जाने का काल संख्यातगुणा, वज्र का ऊंचा जाने का काल सबसे थोड़ा, उससे नीचे जाने का काल विशेषाधिक। चमरेन्द्रजी के नीचे जाने का काल सबसे थोड़ा, उससे ऊंचा जाने का काल संख्यातगुणा।

सबके गति काल की अल्पाबहुत्व–शक्रेन्द्रजी के ऊंचा जाने का और चमरेन्द्रजी के नीचा जाने का काल परस्पर तुल्य सबसे थोड़ा है। शक्रेन्द्रजी के नीच जाने का और वज्र के

ऊंचा जाने का काल परस्पर तुल्य है, उससे संख्यातगुणा है। चमरेन्द्रजी के ऊंचा जाने का और वज्र के नीचा जाने का काल परस्पर तुल्य है, उससे विशेपाधिक है।

चमरेन्द्रजी की ऋद्धि परिवार जो जो पावे सो कह देना चाहिए। चमरेन्द्रजी की एक सागर की स्थिति है। महाविदेह क्षेत्र में जन्म लेकर मोक्ष जावेंगे। शेष अधिकार सूत्र से जान लेना चाहिए।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

क्षेत्र काल द्वार का यन्त्र—

जाने की मार्गणा	जितना क्षेत्र जावे	जानेमें जितना समय लगता है
१ शक्रेन्द्रजी को	ऊंचा क्षेत्र जाने में	१ समय लगता है।
२ वज्र को	” ” ”	२ समय लगते हैं।
३ चमरेन्द्रजी को	” ” ”	३ समय लगते हैं।
१ चमरेन्द्रजी को	नीचा क्षेत्र जाने में	१ समय लगता है।
२ शक्रेन्द्रजी को	” ” ”	२ समय लगते हैं।
३ वज्र को	” ” ”	३ समय लगते हैं।

एक समय में तीन क्षेत्र में जाने की अल्पाबहुत्व का यन्त्र

काल आसरी—

मार्गणा	ऊंचा क्षेत्र जावे	तिरछा क्षेत्र जावे	नीचा क्षेत्र जावे	ऊंचा क्षेत्र भाग	तिरछा क्षेत्र भाग	नीचा क्षेत्र भाग
शक्रेन्द्रजी १ समय में	संख्यात भाग अधिक जावे ३	संख्यात भाग अधिक जावे २	सबसे थोड़ा जावे १	२४	१८	१२
वज्र १ समय में	विशेषाधिक जावे ३	विशेषाधिक जावे २	सबसे थोड़ा जावे १	१२	१०	८
चमरेन्द्रजी १ समय में	सबसे थोड़ा जावे १	संख्यात भाग अधिक जावे २	संख्यात भाग अधिक जावे ३	८	१६	२४

जावण काल की अल्पाबहुत्व का यन्त्र

मार्गणा	ऊंचा जाने की	नीचा जाने की
१ शक्रेन्द्रजी	थोड़ा काल	संख्यातगुणा काल
२ वज्र	थोड़ा काल	विशेषाधिक काल
३ चमरेन्द्रजी	संख्यातगुणा काल	थोड़ा काल

सब के गति काल की अल्पाबहुत्व का यंत्र

१ शक्रेन्द्रजी ऊंचा चमरेन्द्रजी नीचा	तुल्य काल	सबसे थोड़ा
२ शक्रेन्द्रजी नीचा वज्र ऊंचा	तुल्य काल	संख्यातगुणा
३ चमरेन्द्रजी ऊंचा वज्र नीचा	तुल्य काल	विशेषाधिक

(थोकड़ा नं० ३५)

श्री भगवतीजी सूत्र के तीसरे शतक के चौथे उद्देशे में अवधिज्ञान की विचित्रता आदि का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

अहो भगवान् ! क्या कोई अवधिज्ञानी भावितात्मा अनगार (साधु) वैक्रिय समुद्घात करके विमान में बैठ कर आकाश में जाते हुए देव को जानता देखता है ? हे गौतम ! (१) कोई देव को देखता है किन्तु विमान को नहीं देखता, (२) कोई विमान को देखता है किन्तु देव को नहीं देखता, (३) कोई देव को भी देखता है और विमान को भी देखता है, (४) कोई देव को भी नहीं देखता और विमान को भी नहीं देखता। इसतरह जैसे देव से ४ भांगे कहे गये हैं वैसे ही देवी से ४ भांगे, देव देवी से ४ भांगे, वृक्ष के अन्दर के भाग और बाहर के भाग से ४ भांगे, यहां तक चार चौभंगियाँ हुई मूल कन्द से ४ भांगे, मूल स्कन्ध से ४ भांगे, मूल त्वचा से ४ भांगे, मूल शाखा से ४ भांगे, मूल प्रवाल से ४ भांगे, मूल पत्र से ४ भांगे, मूल फूल से ४ भांगे, मूल फल से ४ भांगे, मूल बीज से ४ भांगे कह देना। ये मूल से ६ चौभङ्गियाँ हुईं। कन्द से ८ चौभङ्गी, स्कन्ध से ७, त्वचा से ६, शाखा से ५, प्रवाल से ४, पत्र से ३, फूल से २, फल बीज से १ चौभङ्गी, इस तरह ये सब ४६ चौभङ्गियाँ हुईं।

२—अहो भगवान् ! वायुकाय किस आकार का वैक्रिय करता है ? हे गौतम ! वायुकाय पताका के आकार वैक्रिय करता है, ऊंची तथा नीची एक पताका करके अपनी ऋद्धि, कर्म, प्रयोग से अनेक योजन तक जाता है। अहो भगवान् ! वह वायुकाय है कि पताका है ? हे गौतम ! वह वायुकाय है, पताका नहीं। इसी तरह बलाहक (बादल) अनेक स्त्री, पुरुष हाथी घोड़ा यावत् नाना रूप बना कर अनेक योजन तक पर-ऋद्धि, परकर्म और परप्रयोग से जाता है। अहो भगवान् ! उसको बलाहक कहना कि स्त्री पुरुषादि कहना ? हे गौतम ! उसे बलाहक कहना किन्तु स्त्री पुरुषादि नहीं कहना।

३—अहो भगवान् ! मरते समय जीव में कौनसी लेश्या होती है ? हे गौतम ! जिस जीव को जिस गति में उत्पन्न होना होता है, वह जीव उसी लेश्या के द्रव्यों को ग्रहण कर काल करता है और उसी लेश्या में उत्पन्न होता है। इस तरह २४ दण्डक में से जिस दण्डक में जो जो लेश्या पावे सो कह देना।

४—अहो भगवान् ! वैक्रिय लब्धिवन्त भावितात्मा अनगार बाहर के पुद्गलों को ग्रहण किये बिना वैभार पर्वत को उल्लंघ सकते हैं (एक बार उल्लंघ सकते हैं) ? प्रलंघ सकते हैं (बार बार उल्लंघ सकते हैं) ? हे गौतम ! णो इणट्ठे समट्ठे। बाहर के पुद्गल लेकर उल्लंघ सकते हैं, प्रलंघ सकते हैं। इसी तरह राजगृही नगरी में जितने रूप हैं उतने वैक्रिय रूप बनाकर

वभार पर्वत में प्रवेश करके समपर्वत को विषम और विषम पर्वत को सम कर सकते हैं।

५—अहो भगवान् ! मायी (प्रमादी) साधु वैक्रिय करता है अथवा अमायी (अप्रमादी) साधु वैक्रिय करता है ? हे गौतम ! मायी (प्रमादी) साधु वैक्रिय करता है किन्तु अमायी नहीं करता है। अहो भगवान् ! इसका क्या कारण है ? हे गौतम ! मायी (प्रमादी) साधु सरस आहार करके वमन करता है, उसके हाड मज्जा (मींजा) तो वलवान होते हैं और लोही मांस पतले होते हैं। उस आहार के वादर पुद्गल हाड, मज्जा, केश, श्मश्रु, रोम, नख, लोही, शुक्रादिपने तथा इन्द्रियांपने (श्रोत्रेन्द्रिय जाव स्पर्शेन्द्रियपने) परिणमते हैं। अमायी (अप्रमादी) साधु रूखा आहार करता है, वमन नहीं करता, उसके हाड मज्जा (मिंजा) पतले होते हैं, लोही मांस जाड़े (घनगाढ़े) होते हैं। वादर पुद्गल उच्चार पासवण खेल सिंघाणादिपने परिणमते हैं। इस कारण से मायी (प्रमादी) साधु वैक्रिय करते हैं और अमायी (अप्रमादी) साधु वैक्रिय नहीं करते हैं।

मायी (प्रमादी) साधु उस कार्य की आलोयणा किये बिना काल करता है (मरता है) इसलिए आराधक नहीं है

और※ अमायी आलोयणा करके काल करता है, इसलिए आराधक है।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ३६)

श्री भगवतीजी सूत्र के तीसरे शतक के पांचवें उद्देशे में 'अणगार वैक्रिय' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

गाथा—इत्थी असी पडागा, जण्णोवइए य होइ बोद्धव्वे।
पल्हत्थिय पलियंके, अभिओग विकुव्वणा मायी ॥

१–अहो भगवान् ! लब्धिवंत भावितात्मा अनगार बाहर के पुद्गल लेकर अनेक स्त्री पुरुष हाथी घोड़ा सिंह व्याघ्र आदि रूप यावत् शिविका (पालखी), स्यन्दमाणी (म्याना) का रूप, ढाल और तलवार वाले मनुष्य के रूप, एक जनेऊ, दो जनेऊ वाले मनुष्य के रूप, एक तरफ पलाठी (पालखी मार कर बैठना), दोनों तरफ पलाठी, एक तरफ पर्यंकासन, दोनों तरफ पर्यंकासन इत्यादि रूप बनाकर आकाश में उड़ने में समर्थ हैं ? जुवती जुवाण के दृष्टान्त से, चक्र नाभि के दृष्टान्त

※ पहले मायी होने के कारण वैक्रिय रूप किये थे, सरस आहार किया था किन्तु पीछे उस बात का पश्चात्ताप करने से वह अमायी हुआ। उस बात की आलोयणा तथा प्रतिक्रमण करने से वह आराधक है।

से वैक्रियरूप बनाकर जम्बूद्वीप को भरने में समर्थ हैं ? हाँ, गौतम ! समर्थ है, विषय आसरी ऐसी शक्ति है, परन्तु कभी ऐसा किया नहीं, करते नहीं और करेंगे नहीं ।

इसी तरह बाहर के पुद्गल ग्रहण करके हाथी, घोड़ा, सिंह, व्याघ्र आदि के रूप बनाकर अनेक योजन जाने में समर्थ है। उनको हाथी घोड़ा आदि नहीं कहना किन्तु अनगार कहना। वे आत्मऋद्धि, आत्मकर्म और आत्म प्रयोग से जाते हैं किन्तु परऋद्धि, परकर्म और परप्रयोग से नहीं जाते । ऐसी विकुर्वणा मायी (प्रमादी) अनगार करते हैं, अमायी (अप्रमादी) अनगार नहीं करते। मायी अनगार उस बात की आलोयणा किये बिना काल करे तो आभियोगिक (दास-सेवक) देवतापने उत्पन्न होते हैं, कोई देवपदवी नहीं पाते। अमायी (अप्रमादी) अनगार आलोयणा करके काल करे तो आभियोगिक (सेवक) देवपने उत्पन्न नहीं होते किन्तु अनाभियोगिक (इन्द्र; सामानिक, तायतिसक, लोकपाल, अहमिन्द्र) नवग्रैवेयक अनुत्तर विमानों में देवपने उत्पन्न होते हैं।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ३७)

श्री भगवतीजी सूत्र के तीसरे शतक के छठे उद्देशे में 'ग्रामादि विकुर्वणा' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१–अहो भगवान् ! क्या राजगृह नगर में रहा हुआ भावितात्मा अनगार मायी मिथ्यादृष्टि वीर्यलब्धि, वैक्रियलब्धि विभंगज्ञान लब्धि से वाणारसी नगरी वैक्रिय कर राजगृही नगरी का रूप जानता देखता है ? हाँ, गौतम ! जानता देखता है। अहो भगवान् ! क्या वह तथाभाव (जैसा है वैसा) से जानता देखता है या अन्यथा भाव (विपरीत) से जानता देखता है ? हे गौतम ! वह तथाभाव से नहीं जानता नहीं देखता किन्तु अन्यथा भाव से जानता देखता है। अहो भगवान् ! इसका क्या कारण ? हे गौतम ! उसको विभंगज्ञान विपरीत दर्शन होने से वह अन्यथाभाव से जानता देखता है।

२–अहो भगवान् ! क्या वाणारसी में रहा हुआ मायी मिथ्यादृष्टि भावितात्मा अनगार राजगृही नगरी वैक्रिय कर वाणारसी का रूप जानता देखता है ? हाँ, गौतम ! जानता देखता है यावत् उसको विभंगज्ञान विपरीतदर्शन होने से वह अन्यथाभाव से जानता देखता है। (वह इस तरह जानता है कि मैं राजगृही में रहा हुआ हूँ और वाणारसी वैक्रिय कर वाणारसी का रूप जानता देखता हूँ)।

३–अहो भगवान् ! क्या मायी मिथ्यादृष्टि भावितात्मा अनगार राजगृही और वाणारसी के बीच में एक बड़ा नगर वैक्रिय कर उसका रूप जानता व देखता है ? हाँ, गौतम ! वह इस तरह जानता देखता है कि यह राजगृही है यह वाणारसी

है, यह इन दोनों के बीच में एक बड़ा नगर है परन्तु वह ऐसा नहीं जानता कि यह तो मैंने स्वयं वैक्रिय किया है।

इस प्रकार इन तीनों ही अलावों में विपरीत दर्शन से तथाभाव (सच्ची बात) से नहीं जानता, नहीं देखता है किन्तु अन्यथा भाव से जानता देखता है।

४-५-६–चौथा पाँचवां छठा अलावा समदृष्टि का कहना चाहिए। इन तीनों ही अलावों में समदृष्टि अवधिज्ञानी वैक्रिय लब्धिवन्त भावितात्मा अनगार सम्यग्दर्शन से तथाभाव (जैसा है वैसा ही) जानता देखता है, अन्यथाभाव (विपरीत) नहीं जानता, नहीं देखता है।

७–अहो भगवान् ! क्या समदृष्टि अवधिज्ञानी वैक्रिय लब्धिवन्त भावितात्मा अनगार बाहर के पुद्गलों को लिये विना ग्राम, नगर यावत् सन्निवेश के रूप वैक्रिय कर सकता है ? हे गौतम ! णो इणट्ठे समट्ठे (ऐसा नहीं कर सकता)।

८–अहो भगवान् ! क्या समदृष्टि अवधिज्ञानी वैक्रिय लब्धिवन्त भावितात्मा अनगार बाहर के पुद्गलों को लेकर ग्राम नगर यावत् सन्निवेश के रूप वैक्रिय कर सकता है ? हाँ, गौतम ! कर सकता है, सम्पूर्ण जम्बूद्वीप को ठसाठस भरने की शक्ति है (विषय आसरी), किन्तु ऐसा कभी किया नहीं, करते नहीं और करेंगे नहीं।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ३५)

श्री भगवतीजी सूत्र के तीसरे शतक के सातवें उद्देशे में शक्रेन्द्रजी के चार लोकपालों का तथा चौथे शतक के आठ उद्देशों में ईशानेन्द्रजी के ४ लोकपाल और ८ राजधानियों का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं-

१-अहो भगवान् ! शक्रेन्द्रजी के कितने लोकपाल हैं ? हे गौतम ! चार लोकपाल हैं-सोम, यम, वरुण, वैश्रमण। सौधर्मावतंसक विमान से पूर्वादि दिशाओं में असंख्याता योजन जाने पर अनुक्रम से इन चारों के विमान आते हैं । इनका यन्त्र और कितनाक वर्णन सूर्याभ विमान के समान है । मेरु पर्वत से दक्षिण दिशा में जितना भी काम होता है वह सब इन चारों लोकपालों की जानकारी में होता है ।

चारों लोकपालों के विमान, विमानों की लम्बाई चौड़ाई, परिधि तथा राजधानी का वर्णन इस प्रकार है—

सोम लोकपाल के सन्ध्याप्रभ विमान और सोमा राजधानी है। यम लोकपाल के वरशिष्ट विमान और जमा राजधानी है। वरुण लोकपाल के सयंजल विमान और वरुणा राजधानी है। वैश्रमण लोकपाल के वल्गु विमान और वैश्रमणा राजधानी है। सब लोकपालों के विमानों की लम्बाई चौड़ाई १२॥ लाख योजन है और परिधि ३९५२८४८ योजन झाझेरी (कुछ ज्यादा) है। राजधानी की लम्बाई चौड़ाई और परिधि जम्बू-

द्वीप प्रमाण है। उपलेणका (चबूतरा) १६०००-१६००० योजन है। सब के* ३४१-३४१ महल-झूमकारूप हैं।

शक्रेन्द्रजी के लोकपाल सोम और यम की स्थिति एक पल्योपम और पल्योपम के तीसरे भाग अधिक की है। वरुण की स्थिति देश ऊणी (कुछ कम) दो पल्योपम की है। वैश्रमण की स्थिति दो पल्योपम की है। सब लोकपालों के पुत्रवत् (पुत्रस्थानीय), आज्ञाकारी देवों की स्थिति १ पल्योपम की है।

सोम लोकपाल के आज्ञाकारी देव देवियों के नाम—सोमकायिक, सोमदेवकायिक, विद्युत्कुमार, विद्युत्कुमारी, अग्निकुमार, अग्निकुमारी, वायुकुमार, वायुकुमारी, चन्द्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र, तारा। पुत्रवत् देवों के नाम— मंगल, विकोलिक, लोहिताक्ष, शनिश्चर, चन्द्र, सूर्य, शुक्र, बुध, बृहस्पति, राहु।

यम लोकपाल के आज्ञाकारी देव देवियों के नाम—यमकायिक, यमदेवकायिक, प्रेतकायिक, प्रेतदेवकायिक, असुरकुमार, असुरकुमारी, कन्दर्प, नरकपाल (परमाधामिक)। पुत्रवत् देवों के नाम—अम्ब, अम्बरिस, श्याम, शबल, रुद्दे (रुद्र), उवरुद्दे

---

* बीच में मूल प्रासाद है उसके चारों तरफ चार महल मूल से आधा लम्बा चौड़ा ऊँचा है। चारों के चौतरफ १६ महल उनसे आधे, उन सोलह के चौतरफ ६४ महल उनसे आधे, उन चौसठ महल के चौतरफ २५६ महल उनसे आधे=१+४+१६+६४+२५६= ३४१ महल का झूमका ऊपर लिखे अनुसार है।

(उपरुद्र), काल, महाकाल, असिपत्र, धनुष, कुम्भ, वालू, वैत-रणी, खरस्वर, महाघोष ।

वरुण लोकपाल के आज्ञाकारी देव-देवियों के नाम—वरुणकायिक, वरुणदेवकायिक, नागकुमार, नागकुमारी, उदधि-कुमार, उदधिकुमारी, स्तनितकुमार, स्तनितकुमारी । पुत्रवत् देवों के नाम—कर्कोटक, कर्दमक, अञ्जन, शंखपाल, पुण्ड्र, पलाश, मोद, जय, दधिमुख, अयंपुल, कातरिक ।

वैश्रमण लोकपाल के आज्ञाकारी देव देवियों के नाम—वैश्रमण कायिक, वैश्रमणदेवकायिक, सुवर्णकुमार सुवर्णकुमारी, द्वीपकुमार द्वीपकुमारी, दिशाकुमार, दिशाकुमारी, वाणव्यन्तर, वाणव्यन्तरी । पुत्रवत् देवों के नाम—पूर्णभद्र, मणिभद्र, शालि-भद्र, सुमनोभद्र, चक्ररक्ष पूर्णरक्ष सद्वान सर्वयश सर्वकाम समृद्ध अमोघ असंग । ग्रामदाह यावत् सन्निवेशदाह धनक्षय जनक्षय कुलक्षय आदि काम सोम लोकपाल के जाणपणा (जानकारी) में होते हैं । डिंबादि अनेक प्रकार के युद्ध और अनेक प्रकार के रोग यम लोकपाल के जाणपणा में होते हैं । अतिवृष्टि और अनावृष्टि, सुकाल दुष्काल, झरना, तालाब, पानी का प्रवाह आदि वरुण लोकपाल के जाणपणा में होते हैं । लोह की खान, सोना चांदी सीसा ताम्बा रत्नों की खान, गडा हुवा धन वैश्रमण लोकपाल के जाणपणा में होते हैं ।

ईशानेन्द्रजी के ४ लोकपाल हैं—सोम, यम, वरुण, वैश्र-मण । ईशानावतंस विमान से उत्तर दिशा में इनके ४ विमान

हैं—सुमन, सर्वतोभद्र, वल्गु, सुबल । सोम और यम की स्थिति दो पल्योपम में पल का तीसरा भाग ऊणी है । वैश्रमण की स्थिति दो पल्योपम की है । वरुण की स्थिति दो पल्योपम और पल का तीसरा भाग अधिक है । मेरु पर्वत से उत्तर दिशा में होने वाले सब काम इनके जाणपणा में होते हैं । सब लोकपालों के पुत्रवत् (पुत्र स्थानीय), आज्ञाकारी देवों की स्थिति १ पल्योपम की है । शेष सारा अधिकार पूर्ववत् जान लेना चाहिए ।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ३६)

श्री भगवतीजी सूत्र के तीसरे शतक के आठवें उद्देशे में 'अधिपति देवों' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! असुरकुमार आदि भवनपति देवों में कितने अधिपति हैं ? हे गौतम ! असुरकुमार आदि दस भवनपतियों की एक एक जाति में १०-१० अधिपति हैं, एक एक जाति में दो दो इन्द्र हैं । एक एक इन्द्र के चार चार लोकपाल हैं ।

२—अहो भगवान् ! वाणव्यन्तर देवों में कितने अधिपति हैं ? हे गौतम ! वाणव्यन्तर देवों में यावत् गन्धर्व तक दो दो इन्द्र हैं और वे ही अधिपति हैं। वाणव्यन्तर देवोंमें लोकपाल नहींहोते।

३—अहो भगवान् ! ज्योतिषी देवों में कितने अधिपति हैं ? हे गौतम ! ज्योतिषी देवों में चन्द्र और सूर्य ये दो अधिपति हैं और ये दो इन्द्र हैं । इनमें लोकपाल नहीं होते ।

४—अहो भगवान् ! वैमानिक देवों में कितने अधिपति हैं ? हे गौतम ! पहले दूसरे देवलोक में १० अधिपति हैं । इसी तरह तीसरे चौथे में १०, पांचवें से आठवें तक में ५—५ (एक-एक इन्द्र चार-चार लोकपाल), नवमा, दसवां में ५, ग्यारहवां, बारहवां में ५ अधिपति हैं । नवग्रैवेयक और अनुत्तर विमानों में अधिपति नहीं होते । वे सब अहमिन्द्र हैं । दक्षिण दिशा के लोकपालों के जो नाम कहे हैं वे ही उत्तर दिशा के लोकपालों के नाम हैं । किन्तु तीसरे के स्थान में चौथा और चौथे के स्थान में तीसरा नाम कहना चाहिए । इनके नाम ठाणांग सूत्र के चौथे ठाणे में हैं ।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ४०)

श्री भगवतीजी सूत्र के तीसरे शतक के दसवें उद्देशे में 'देवता देवी की परिषद् परिवार, स्थिति' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! भवनपति और वैमानिक देवों में कितनी परखदा (परिषद्-सभा) हैं ? ? हे गौतम ! तीन तीन परखदा हैं—समिया (शमिका-शमिता), चण्डा, जाया ।

इनमें से समिया आभ्यन्तर परखदा है। इससे इन्द्र महाराज सलाह पूछते हैं, विचार करते हैं। चण्डा मध्यम परखदा है, इससे इन्द्र महाराज अपना विचार कहते हैं और नक्की (तय) करते हैं। जाया बाहर की परखदा है, इसको इन्द्र महाराज अपना विचारा हुआ काम कह कर, आज्ञा देते हैं। आभ्यन्तर परखदा बुलाने से आती है। मध्यम परखदा बुलाने से और बिना बुलाने से भी आती है, बाह्य परखदा बिना बुलाये ही आती है।

२—अहो भगवान् ! वाणव्यन्तर देवों में कितनी परखदा है ? हे गौतम ! तीन परखदा है—इसा, तुडिया, दढरया (दृढरथा)।

३—अहो भगवान् ! ज्योतिषी देवों में कितनी परखदा है ? हे गौतम ! तीन परखदा है—तुम्बा, तुडिया और पर्वा।

इनका (वाणव्यन्तर और ज्योतिषी देवों की परखदाओं का) काम भवनपति और वैमानिक देवों में कहा उसी तरह जानना चाहिए।

अब संख्या और स्थिति का अधिकार चलता है सो कहते हैं—

चमरेन्द्रजी की आभ्यन्तर परखदा में २४००० देव और ३५० देवियाँ, मध्यम परखदा में २८००० देव और ३०० देवियाँ, बाह्य परखदा में ३२००० देव और २५० देवियाँ हैं। देवों

की स्थिति क्रम से २॥ पल, २ पल और १॥ पल है। देवियों की स्थिति क्रम से १॥ पल, १ पल, और आधा पल है।

बलीन्द्रजी की तीनों परखदा में क्रम से २०००० , २४००० और २८००० देव हैं और ४५०, ४०० और ३५० देवियां हैं। देवों की स्थिति क्रम से ३॥ पल, ३ पल और २॥ पल है। देवियों की स्थिति २॥ पल, २ पल, और १॥ पल हैं।

दक्षिण दिशा के नवनिकाय के देवों की तीनों परखदा में क्रम से ६००००, ७०००० और ८०००० देव हैं, और १७५, १५० और १२५ देवियां हैं। देवों की स्थिति क्रम से आधा पल झाझेरी, आधा पल और देश ऊणी आधा पल है। देवियों की स्थिति क्रम से देश ऊणी आधा पल, पाव पल झाझेरी और पाव पल की है।

उत्तर दिशा के नवनिकाय के देवों की तीनों परखदा में क्रम से ५००००, ६०००० और ७०००० देव हैं और २२५, २०० और १७५ देवियां हैं। देवों की स्थिति क्रम से देश ऊणी एक पल, आधा पल झाझेरी और आधा पल है। देवियों की स्थिति आधा पल, देश ऊणी आधा पल और पाव पल झाझेरी है।

वाणव्यन्तर देवों के ३२ इन्द्र और ज्योतिषी देवों के २ इन्द्रों की तीनों परखदा में क्रम से ८०००, १०००० और १२००० देव हैं और १००, १०० और १०० देवियां हैं। देवों की स्थिति आधा पल, देश ऊणी आधा पल और पाव

पल झाझेरी है। देवियों की स्थिति पाव पल झाझेरी, पाव पल और देश ऊणी पाव पल की है।

शक्रेन्द्रजी की तीनों परखदा में क्रम से १२०००, १४००० और १६००० देव हैं और ७००, ६०० और ५०० देवियाँ हैं। देवों की स्थिति ५ पल, ४ पल और ३ पल है। देवियों की स्थिति ३ पल, २ पल और १ पल है।

ईशानेन्द्र जी की तीनों परखदा में क्रम से १००००, १२००० और १४००० देव हैं और ९००, ८०० और ७०० देवियाँ हैं। देवों की स्थिति ७ पल, ६ पल और ५ पल है। देवियों की स्थिति ५ पल, ४ पल और ३ पल है।

सनत्कुमारेन्द्रजी की तीनों परखदा में क्रम से ८०००, १०००० और १२००० देव हैं❀। देवों की स्थिति ४॥ सागर ५ पल, ४॥ सागर ४ पल और ४॥ सागर ३ पल है। माहेन्द्र इन्द्र की तीनों परखदा में क्रम से ६०००, ८००० और १०००० देव हैं। देवों की स्थिति ४॥ सागर ७ पल, ४॥ सागर ६ पल और ४॥ सागर ५ पल है। ब्रह्म इन्द्र की तीनों परखदा में क्रम से ४०००, ६००० और ८००० देव हैं। इन की स्थिति क्रम से ८॥ सागर ५ पल, ८॥ सागर ४ पल और

❀ दूसरे देवलोक से आगे परिगृहीता देवियाँ नहीं होती हैं। इसलिये दूसरे देवलोक से आगे देवियों की संख्या और स्थिति नहीं बताई गई है।

८॥ सागर ३ पल है। लान्तक इन्द्र की तीनों परखदा में क्रम से २०००, ४००० और ६००० देव हैं। इनकी स्थिति क्रम से १२ सागर ७ पल, १२ सागर ६ पल और १२ सागर ५ पल है। महाशुक्र इन्द्र की तीनों परखदा में क्रम से १०००, २००० और ४००० देव हैं। इन देवों की स्थिति १५॥ सागर ५ पल, १५॥ सागर ४ पल और १५॥ सागर ३ पल है। सहस्रार इंद्र की तीनों परखदा में क्रम से ५००, १००० और २००० देव हैं। इनकी स्थिति १७॥ सागर ७ पल, १७॥ सागर ६ पल, और १७॥ सागर ५ पल है।❀ प्राणत इन्द्र की तीनों परखदा में क्रम से २५०, ५०० और १००० देव हैं। इनकी स्थिति १६ सागर ५ पल, १६ सागर ४ पल और १६ सागर ३ पल है। × अच्युतेन्द्र की तीनों परखदा में क्रम से १२५, २५० और ५०० देव हैं। इनकी स्थिति २१ सागर ७ पल, २१ सागर ६ पल और २१ सागर ५ पल है ÷ ।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

❀ नवमा आणत देवलोक और दसवां प्राणत देवलोक दोनों का एक ही इन्द्र प्राणतेन्द्र होता है।

× ग्यारहवाँ आरण देवलोक और बारहवाँ अच्युत देवलोक, इन दोनों देवलोकों का एक ही इन्द्र अच्युतेन्द्र होता है।

÷ नव ग्रैवेयक और पांच अनुत्तर विमानों में तीन परखदा नहीं होती। वे सब देव समान ऋद्धि वाले होते हैं। उनमें छोटे बड़े का भाव और स्वामी सेवक का भाव नहीं होता है। इनमें इन्द्र नहीं होता है। ये सब अहमिन्द्र (मैं स्वयं ही इन्द्र हूँ) होते हैं।

(थोकड़ा नं० ४१)

श्री भगवतीजी सूत्र के पांचवें शतक के सातवें उद्देशे में 'कम्पमान' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१ एयति वेयति द्वार, २ खड्गधारा द्वार, ३ अग्निशिखा द्वार, ४ पुष्करावर्त मेघ द्वार, ५ सअड्ढे समज्झे सपएसे उदाहु अणड्ढे अमज्झे अपएसे द्वार, ६ फुसमाण द्वार, ७ स्थिति द्वार ८ कम्पमान अकम्पमान का स्थिति द्वार, ९ वर्ण गन्ध रस स्पर्श का स्थिति द्वार, १० सूक्ष्म बादर का स्थिति द्वार, ११ शब्दपने अशब्दपने परिणमने का स्थिति द्वार, १२ परमाणु का अन्तर द्वार, १३ कम्पमान अकम्पमान का अन्तर द्वार, १४ वर्णादिक का अन्तर द्वार, १५ सूक्ष्म बादर का अन्तर द्वार, १६ शब्दपने अशब्दपने परिणम्या का अन्तर द्वार, १७ अल्प बहुत्व द्वार।

१—अहो भगवान् ! क्या परमाणुपुद्गल कंपे, विशेष कंपे, यावत् उस उस रूप से परिणामे ? हे गौतम ! सिय (कदाचित्) कम्पे, विशेष कम्पे यावत् उस उस रूप से परिणामे, सिय नहीं कम्पे यावत् नहीं परिणमे। परमाणु में भांगा पावे दो—१ सिय कम्पे, २ सिय नहीं कम्पे। दो प्रदेशी खंध में भांगा पावे तीन—१ सिय कंपे, २ सिय नहीं कंपे, ३ देश कंपे देश नहीं कम्पे। तीन प्रदेशी खंध में भांगा पावे पांच—१ सिय कम्पे, २ सिय

नहीं कम्पे, ३ सिय एक देश कम्पे, एक देश नहीं कम्पे, ४ सिय एक देश कम्पे, बहुत देश नहीं कम्पे, ५ सिय बहुत देश कम्पे एक देश नहीं कम्पे। चार प्रदेशी खंध में भांगा पावे छह—१ सिय कम्पे, २ सिय नहीं कम्पे, ३ सिय एक देश कंपे एक देश नहीं कम्पे, ४ सिय एक देश कम्पे बहुत देश नहीं कम्पे, ५ सिय बहुत देश कम्पे एक देश नहीं कम्पे, ६ सिय बहुत देश कम्पे बहुत देश नहीं कम्पे। चार प्रदेशी की तरह पांच प्रदेशी यावत् दस प्रदेशी, संख्यात प्रदेशी असंख्यात प्रदेशी, सूक्ष्म अनन्तप्रदेशी, बादर अनन्त प्रदेशी खंध तक छह छह भांगा कह देना। सब भांगा * ७६ हुए।

२—अहो भगवान्! क्या परमाणु पुद्गल तलवार की धार, खुर (उस्तरा) की धार पर बैठे (आश्रय लेवे)? हाँ गौतम! बैठे। अहो भगवान्! क्या उस परमाणु पुद्गल का छेदन भेदन होवे? हे गौतम! णो इणट्ठे समट्ठे (छेदन भेदन नहीं होवे)। इसी तरह सूक्ष्म अनन्त प्रदेशी खंध तक कह देना। बादर अनन्त प्रदेशी खंध तलवार की धार, खुर की धार पर बैठे, सिय छेदन भेदन पावे, सिय नहीं पावे।

---

* परमाणु पुद्गल से २ भांगे, दो प्रदेशी खंध से ३ भांगे, तीन प्रदेशी खंध से ५ भांगे, चार प्रदेशी खंध से दश प्रदेशी खंध तक ७ बोलों में ६—६ भांगों के हिसाब से ४२ भांगे, संख्यात प्रदेशी खंध से जाव बादर अनन्त प्रदेशी खंध तक ४ बोलों में ६—६ भांगों के हिसाब से २४ भांगे सब मिलकर २ + ३ + ५ + ४२ + २४ = ७६ भाँगे हुए।

३—अहो भगवान् ! क्या परमाणु पुद्गल अग्नि शिखा आदि में से निकले ? हाँ, गौतम ! निकले। अहो भगवान् ! अग्नि शिखा आदि में से निकले तो क्या वह परमाणु पुद्गल जले ? हे गौतम ! णो इणट्ठे समट्ठे (नहीं जले) इसी तरह दो प्रदेशी खंध से लेकर सूक्ष्म अनन्त प्रदेशी खंध तक कह देना। बादर अनन्त प्रदेशी खंध अग्नि शिखा आदि में सिय जले सिय नहीं जले।

४—अहो भगवान् ! क्या परमाणु पुद्गल पुष्कर संवर्त मेघ के बीच में से निकले ? हाँ, गौतम ! निकले। अहो भगवान् ! पुष्कर संवर्त मेघ के बीच से निकले तो क्या भींजे ? हे गौतम ! नहीं भींजे। अहो भगवान् ! क्या परमाणु पुद्गल गंगा सिन्धु महानदियों के प्रवाह में से निकले ? हाँ, गौतम ! निकले। अहो भगवान् ! परमाणु पुद्गल गंगा सिन्धु महानदियों के प्रवाह में से निकले तो क्या स्खलना पावे ? हे गौतम ! नहीं पावे। इसी तरह दो प्रदेशी खंध से लेकर सूक्ष्म अनन्तप्रदेशी खंध तक कह देना। बादर अनन्त प्रदेशी खंध पुष्कर संवर्त मेघ से सिय भींजे सिय नहीं भींजे। गंगा सिन्धु महा नदी के प्रवाह में सिय स्खलना पावे, सिय नहीं पावे।

५—अहो भगवान् ! क्या परमाणु पुद्गल* सअड्ढे समज्झे

---

* सअड्ढे—आधा भाग सहित। समज्झे—मध्य भाग सहित। सपएसे—प्रदेश सहित। अणड्ढे—आधा भाग रहित। अमज्झे—मध्य भाग रहित। अपएसे—प्रदेश रहित।

सपएसे है अथवा अणड्ढे अमज्झे अपएसे है ? हे गौतम ! परमाणु पुद्गल अणड्ढे अमज्झे अपएसे है किन्तु सअड्ढे समज्झे सपएसे नहीं है। दो प्रदेशी खंध सअड्ढे अमज्झे सपएसे है किन्तु अणड्ढे समज्झे अपएसे नहीं है। तीन प्रदेशी खंध अणड्ढे समज्झे सपएसे हैं किंतु सअड्ढे अमज्झे अपएसे नहीं है।

जिस तरह दो प्रदेशी खंध कहा उसी तरह चार प्रदेशी, छह प्रदेशी, आठ प्रदेशी, दस प्रदेशी खंध आदि÷ समसंख्या वाले खंध कह देना। जिस तरह तीन प्रदेशी खंध कहा उसी तरह पांच प्रदेशी, सात प्रदेशी नव प्रदेशी आदि❀ विषम संख्या वाले खंध कह देना।

संख्यातप्रदेशी खंध सिय सअड्ढे अमज्झे सपएसे, सिय अणड्ढे समज्झे सपएसे नो अपएसे। इसी तरह असंख्यात प्रदेशी खंध और अनन्त प्रदेशी खंध कह देना।

६—अहो भगवान् ! परमाणु पुद्गल परमाणु पुद्गल को स्पर्श करता है तो क्या १ देसेणं देसं फुसइ †, २ देसेणं देसे

÷ जिस संख्या में दो का भाग बराबर चला जाय, उसको सम-संख्या कहते हैं। जैसे—२, ४, ६, ८, १०, १२, १४, आदि।

❀ जिस संख्या में दो का भाग बराबर न जावे, किन्तु एक बाकी बच जावे, उसको विषम संख्या कहते हैं। जैसे—३, ५, ७, ९, ११, १३, १५ आदि।

† १—एक देश से एक देश को स्पर्श करता है।

२—एक देश से बहुत देशों को स्पर्श करता है।

३—एक देश से सबको स्पर्श करता है।

फुसइ, ३ देसेणं सव्वं फुसइ, ४ देसेहिं देसं फुसइ, ५ देसेहिं देसे फुसइ, ६ देसेहिं सव्वं फुसइ, ७ सव्वेणं देसं फुसइ, ८ सव्वेणं देसे फुसइ, ९ सव्वेणं सव्वं फुसइ ? हे गौतम ! १ नो देसेणं देसं फुसइ, २ नो देसेणं देसे फुसइ, ३ नो देसेणं सव्वं फुसइ, ४ नो देसेहिं देसं फुसइ, ५ नो देसेहिं देसे फुसइ, ६ नो देसेहिं सव्वं फुसइ, ७ नो सव्वेणं देसं फुसइ, ८ नो सव्वेणं देसे फुसइ, ९ सव्वेणं सव्वं फुसइ ।

एक परमाणु एक परमाणु को स्पर्शे तो भांगो पावे १ नवमो । एक परमाणु दो प्रदेशी खंध को स्पर्शे तो भांगा पावे २–सातवां नवमा । एक परमाणु तीन प्रदेशी खंध को स्पर्शे तो भांगा पावे ३–सातवां, आठवां नवमा । जिस तरह तीन प्रदेशी खंध कहा, उसी तरह चार प्रदेशी, पांच प्रदेशी यावत् दस प्रदेशी, संख्यात प्रदेशी, असंख्यात प्रदेशी, अनन्त प्रदेशी तक ११ बोलों से भांगा पावे ३–३=३३ और परमाणु का १ भांगा और दो प्रदेशी से २ भांगे इस तरह परमाणु पुद्गल के सब भांगे ३६ हुए । (१+२+३३=३६)

४—बहुत देशों से एक देश को स्पर्श करता है ।
५—बहुत देशों से बहुत देशों को स्पर्श करता है ।
६—बहुत देशों से सबको स्पर्श करता है ।
७—सबसे एक देश को स्पर्श करता है ।
८—सबसे बहुत देशों को स्पर्श करता है ।
९—सबसे सबको स्पर्श करता है ।

दो प्रदेशी खंध परमाणु पुद्गल को स्पर्शे तो भांगा पावे २–तीसरा, नवमा। दो प्रदेशी खंध दो प्रदेशी खंध को स्पर्शे तो भांगा पावे ४–पहला, तीसरा, सातवां, नवमा। दो प्रदेशी खंध तीन प्रदेशी खंध को स्पर्शे तो भांगा पावे ६–पहला, दूसरा, तीसरा, सातवां, आठवां, नवमा। इसी तरह अनन्त प्रदेशी खंध तक कह देना। दो प्रदेशी खंध के सब भांगे ७२ हुए।

तीन प्रदेशी खंध एक परमाणु पुद्गल को स्पर्शे तो भांगा पावे ३–तीसरा, छठा, नवमा। तीन प्रदेशी खंध दो प्रदेशी खंध को स्पर्शे तो भांगा पावे ६–पहला, तीसरा, चौथा, छठा, सातवां, नवमा। तीन प्रदेशी खंध तीन प्रदेशी खंध को स्पर्शे तो भांगा पावे ९। इसी तरह अनन्त प्रदेशी खंध तक कह देना चाहिए। तीन प्रदेशी खंध के सब भांगा १०८ हुए। जिस तरह तीन प्रदेशी खंध कहा उसी तरह चार प्रदेशी खंध से लगा कर अनन्त प्रदेशी खंध तक कह देना चाहिए। हरेक बोल में १०८–१०८ भांगा होते हैं।❀

७–स्थिति द्वार—परमाणु पुद्गल की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट असंख्याता काल की है। इसी तरह दो प्रदेशी खंध से लगा कर अनन्त प्रदेशी खंध तक स्थिति कह देनी चाहिए।

❀ परमाणु के ३६, द्विप्रदेशी के ७२, तीन प्रदेशी से यावत् दस प्रदेशी तक तथा संख्यात प्रदेशी, असंख्यात प्रदेशी, अनन्त प्रदेशी, इन ग्यारह बोलों के १०८–१०८ भांगे होते हैं। ये कुल मिला कर १२९६ भांगे होते हैं।

८–कंपमान अकंपमान का स्थिति द्वार—एक आकाश प्रदेश ओघाया कंपमान की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग की है। अकंपमान की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट असंख्याता काल की है। इसी तरह दो आकाश प्रदेश ओघाया से लगा कर असंख्यात आकाश प्रदेश ओघाया तक की स्थिति कह देनी चाहिए।

९–वर्ण गन्ध रस स्पर्श का स्थिति द्वार—वर्ण गन्ध रस स्पर्श की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट असंख्याता काल की है। इसी तरह एक गुण काला से लेकर अनन्त गुण काला तक की स्थिति कह देनी चाहिए। काला कहा उसी तरह वर्णादिक १९ बोल और कह देने चाहिए।

१०–सूक्ष्म बादर का स्थिति द्वार—सूक्ष्म बादर पुद्गलों की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट असंख्याता काल की है।

११–शब्दपने अशब्दपने परिणमने का स्थिति द्वार—शब्दपने परिणम्या की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग की है। अशब्दपने परिणम्या की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट असंख्याता कालकी है।

१२–परमाणु का अन्तर द्वार–—परमाणु पुद्गल का अन्तर जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट असंख्याता काल का है। दो प्रदेशी खंध से लगा कर अनन्त प्रदेशी खंध तक का अन्तर जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट अनन्त काल का है।

१३–कंपमान अकंपमान का अन्तर द्वार— एक आकाश प्रदेश ओघाया यावत् असंख्यात आकाश प्रदेश ओघाया तक कंपमान का अन्तर जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट असंख्याता काल का है। अकम्पमान का अन्तर जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग का है।

१४–वर्णादिक का अन्तर द्वार—वर्ण गन्ध रस स्पर्श का अन्तर जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट असंख्याता काल का है।

१५–सूक्ष्म बादर का अन्तर द्वार—सूक्ष्म बादर का अन्तर जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट असंख्याता काल का है।

१६–शब्दपने अशब्दपने परिणम्या का अन्तर द्वार—शब्दपने परिणम्या का अन्तर जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट असंख्याता काल का है। अशब्दपने परिणम्या का अन्तर जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग का है।

१७–अल्पबहुत्व द्वार—❀ सब से थोड़ा खेत्तट्ठाणाउए (क्षेत्र स्थान आयु), २ उससे ओगाहणट्ठाणाउए (अवगाहना

❀ क्षेत्र स्थान आयु अर्थात् क्षेत्र का काल सब से थोड़ा है, उससे अवगाहना स्थान आयु अर्थात् अवगाहना का काल असंख्यातगुणा है। इसका कारण यह है कि—कल्पना कीजिये कि एक सौ प्रदेशी स्कन्ध एक पाँच प्रदेशी आकाश प्रदेश पर पाँच प्रदेशी अवगाहना से बैठा है। वहां से उठ कर वह दूसरे स्थान पर बैठ गया। इस तरह वह स्कन्ध उसी अवगाहना से अनेक जगह बैठता गया तो इस प्रकार उसका क्षेत्र तो पलटता (बदलता) गया है किन्तु अवगाहना नहीं पलटी है।

स्थान आयु) असंख्यातगुणा, ३ उससे दव्वट्ठाणाउए (द्रव्य स्थान आयु) असंख्यातगुणा, ४ उससे भावट्ठाणाउए (भाव-स्थान आयु) असंख्यात गुणा ।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ४२)

श्री भगवतीजी सूत्र के पांचवें शतक के आठवें उद्देशे में 'सप्रदेशी अप्रदेशी' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं ।

१—श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के शिष्य नियंठिपुत्र अनगार ने नारदपुत्र अनगार से पूछा कि हे आर्य ! आपकी धारणा प्रमाणे क्या सब पुद्गल सअड्ढा समज्झा सपएसा है अथवा अणड्ढा अमज्झा अपएसा है ?

वही अवगाहना लम्बे समय तक ज्यों की त्यों रही है । इसलिए क्षेत्र की अपेक्षा अवगाहना का काल असंख्यात गुणा है ।

वही सौ प्रदेशी स्कन्ध पांच प्रदेशी अवगाहना को छोड़ कर कहीं चार प्रदेशी अवगाहना से और कहीं कम ज्यादा अवगाहना से बैठता गया तो इससे उसकी अवगाहना का पलटा तो हो गया किन्तु द्रव्य का पलटा नहीं हुआ । वही द्रव्य लम्बे काल तक रहा । इसलिये अवगाहना से द्रव्य का काल असंख्यातगुणा है ।

वही सौ प्रदेशी स्कन्ध वर्ण की अपेक्षा दस गुण काला था । अब चाहे वह पचास प्रदेशी या कम ज्यादा द्रव्य वाला हो गया किन्तु दस गुण काला ज्यों का त्यों रहा तो उसके द्रव्य का तो पल्टा हो गया किन्तु दस गुण काला भाव ज्यों का त्यों बना रहा । इसलिए द्रव्य से भाव का काल असंख्यातगुणा है ।

नारद पुत्र अनगार ने जवाब दिया कि हे आर्य! मेरी धारणा प्रमाणे सब पुद्गल सअड्ढा समज्भा सपएसा है, किन्तु अणड्ढा असज्भा अपएसा नहीं है।

२—नियंठिपुत्र अनगार ने पूछा कि हे आर्य! आपकी धारणा प्रमाणे क्या सब पुद्गल द्रव्य क्षेत्र काल भाव की अपेक्षा सअड्ढा समज्भा सपएसा है?

नारदपुत्र ने जवाब दिया कि हे आर्य! सब पुद्गल द्रव्य क्षेत्र काल भाव की अपेक्षा सअड्ढा समज्भा सपएसा हैं।

३—नियंठिपुत्र अनगार ने पूछा कि हे आर्य! यदि सब पुद्गल द्रव्य क्षेत्र काल भाव से सअड्ढा समज्भा सपएसा हैं तो आपके मतानुसार एक परमाणु पुद्गल, एक प्रदेशावगाढ पुद्गल, एक समय की स्थिति वाला पुद्गल एक गुण काला पुद्गल सअड्ढा समज्भा सपएसा होने चाहिए, अणड्ढा अमज्भा अपएसा नहीं होने चाहिए। यदि आपकी धारणानुसार इस तरह न होवे तो आपका कहना मिथ्या होगा।

नारदपुत्र अनगार ने नियंठिपुत्र अनगार से कहा कि हे देवानुप्रिय! मैं इस अर्थ को नहीं जानता हूँ, नहीं देखता हूँ। इस अर्थ को कहने में यदि आपको ग्लानि (कष्ट) न होती हो तो आप फरमावें। इसका अर्थ मैं आपके पास से सुनना चाहता हूँ, धारण करना चाहता हूं।

तब नियंठिपुत्र अनगार ने नारदपुत्र अनगार से कहा कि

हे आर्य ! मेरी धारणा प्रमाणे सब पुद्गल द्रव्य क्षेत्र काल भाव से सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी हैं। जो पुद्गल द्रव्य से अप्रदेशी है वह क्षेत्र से नियमा (निश्चित रूप से) अप्रदेशी होता है, काल से सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी होता है और भाव से सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी होता है। जो पुद्गल क्षेत्र से अप्रदेशी है वह द्रव्य से, काल से और भाव से सिय सप्रदेशी सिय अप्र-देशी होता है। जो पुद्गल काल से अप्रदेशी है वह द्रव्य से, क्षेत्र से और भाव से सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी होता है। जो पुद्गल भाव से अप्रदेशी होता है वह द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी होता है। जो पुद्गल द्रव्य से सप्रदेशी है वह पुद्गल क्षेत्र से, काल से, भाव से सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी होता है। जो पुद्गल क्षेत्र से सप्रदेशी होता है वह द्रव्य से नियमा सप्रदेशी होता है। काल से और भाव से सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी होता है। जो पुद्गल काल से सप्रदेशी होता है वह पुद्गल द्रव्य से, क्षेत्र से और भाव से सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी होता है। जो पुद्गल भाव से सप्रदेशी होता है वह पुद्गल द्रव्य से, क्षेत्र से और काल से सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी होता है।

फिर नारदपुत्र अनगार ने पूछा कि हे देवानुप्रिय ! सप्र-देशी अप्रदेशी में द्रव्य क्षेत्र काल भाव की अपेक्षा कौन किससे थोड़ा, बहुत, सरीखा और विशेषाधिक है ?

तब नियंठिपुत्र अनगार ने जवाब दिया कि हे नारदपुत्र !*
१ सब से थोड़ा भाव से अप्रदेशी, २ उससे काल से अप्रदेशी असंख्यात गुणा, ३ उससे द्रव्य से अप्रदेशी असंख्यात गुणा, ४ उससे क्षेत्र से अप्रदेशी असंख्यात गुणा, ५ उससे क्षेत्र से सप्रदेशी असंख्यात गुणा, ६ उससे द्रव्य से सप्रदेशी विसेसाहिया (विशेषाधिक), ७ उससे काल से सप्रदेशी विसेसाहिया, ८ उससे भाव से सप्रदेशी विसेसाहिया।

इस अर्थ को सुनकर नारदपुत्र अनगार ने नियंठिपुत्र अनगार को वन्दना नमस्कार किया और अपने निज के द्वारा कहे

---

* सब से थोड़े भाव से अप्रदेशी—जैसे एक गुण काला नीला आदि। २—उससे काल से अप्रदेशी असंख्यात गुणा—जैसे एक समय की स्थिति वाले पुद्गल। ३—उससे द्रव्य से अप्रदेशी असंख्यात गुणा—जैसे सब परमाणु पुद्गल। ४ उससे क्षेत्र से अप्रदेशी असंख्यातगुणा—जैसे एक एक आकाश प्रदेश अवगाहे पुद्गल। ५ उससे क्षेत्र से सप्रदेशी असंख्यातगुणा—जैसे दो आकाश प्रदेश अवगाहे हुए, तीन आकाश प्रदेश अवगाहे हुए यावत् असंख्यात आकाश प्रदेश अवगाहे हुए पुद्गल। ६ उससे द्रव्य से सप्रदेशी विशेषाहिया—जैसे दो प्रदेशी स्कंध, तीन प्रदेशी स्कन्ध, यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध। ७ उससे काल से सप्रदेशी विशेषाहिया, जैसे—दो समय तीन समय यावत् असंख्यात समय की स्थिति वाले पुद्गल। ८ उससे भाव से सप्रदेशी विशेषाहिया—जैसे—दो गुण काले, तीन गुण काले यावत् अनन्त गुण काले आदि पुद्गल।

हुए अर्थ के लिए विनयपूर्वक बारम्बार क्षमा मांगी। फिर तप संयम से अपनी आत्मा को भावते हुए विचरने लगे।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ४२)

श्री भगवतीजी सूत्र के पांचवें शतक के आठवें उद्देशे में 'वर्द्धमान हायमान अवट्ठिया' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

जिस जगह जीव आते जाते बढते रहते हैं उसे वड्ढमाण (वर्द्धमान) कहते हैं, जिस जगह जीव आते जाते घटते हैं उसे हायमान कहते हैं। जिस जगह जीव आते नहीं जाते नहीं अथवा सरीखे आते और सरीखे जाते हैं उसे अवट्ठिया (अवस्थित) कहते हैं। इस तरह वड्ढमाण, हायमाण, अवट्ठिया ये तीन भांगे होते हैं।

समुच्चय जीव में भांगो पावे एक–अवट्ठिया। २४ दण्डक में भांगा पावे ३। सिद्ध भगवान् में भांगा पावे २–पहला, तीसरा।

समुच्चय जीव में भांगो पावे एक–अवट्ठिया, जितने जीव हैं सदाकाल उतने ही रहते हैं, घटते बढ़ते नहीं। १९ दण्डक (पांच स्थावर छोड़कर) में भांगा पावे ३, जिसमें हायमान वड्ढमाण की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग की है। अवट्ठिया की स्थिति जघन्य एक

समय की, ❀ उत्कृष्ट अपने अपने विरह काल से दुगुनी है। पांच स्थावर में भांगा पावे ३, जिसमें तीनों ही भांगों की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग की है। सिद्ध भगवान् में भांगा पावे २—जिसमें वड्ढमाण की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट ८ समय की, अवट्ठिया की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट छह महीनों की है।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

---

* अवट्ठिया की उत्कृष्ट स्थिति—समुच्चय नरक की २४ मुहूर्त की पहली नरक की ४८ मुहूर्त्त की, दूसरी नरक की १४ दिन रात की, तीसरी नरक की १ मास की, चौथी नरक की २ मास की, पांचवीं नरक की ४ मास की, छठी नरक की ८ मास की, सातवीं नरक की १२ मास की। समुच्चय देवता, तिर्यंच, मनुष्य की २४-२४ मुहूर्त की—भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी, पहले दूसरे देवलोक की और सम्मूर्छिम मनुष्य की ४८ मुहूर्त्त की, तीन विकलेन्द्रिय की और असन्नी तिर्यञ्च पञ्चेंद्रिय की २ अन्तर्मुहूर्त्त की, सन्नी तिर्यञ्च पञ्चेंद्रिय और सन्नी मनुष्य की २४ मुहूर्त्त की, तीसरे देवलोक की १८ दिन रात ४० मुहूर्त्त की, चौथे देवलोक की २४ दिन रात २० मुहूर्त्त की, पांचवें देवलोक की ४५ दिन रात की, छठे देवलोक की ९० दिन रात की, सातवें देवलोक की १६० दिन रात की, आठवें देवलोक की २०० दिन रात की, नवमें दसवें देवलोक की संख्याता मास की, ग्यारहवें बारहवें देवलोक की संख्याता वर्षों की, नव-

(थोकड़ा नं० ४४)

श्री भगवतीजी सूत्र के पांचवें शतक के आठवें उद्देशे में 'सोवचय सावचय' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान्! क्या जीव ❀ सोवचया हैं (सिर्फ उपजते ही हैं, चवते नहीं)? या सावचया हैं (सिर्फ चवते ही हैं, उपजते नहीं)? या सोवचया सावचया हैं (उपजते भी हैं,

---

ग्रैवेयक के नीचे की त्रिक की संख्याता सैंकड़ों वर्षों की, वीचली त्रिक की संख्याता हजारों वर्षों की, ऊपर की त्रिक की संख्याता लाखों वर्षों की, चार अनुत्तर विमान की पल के असंख्यातवें भाग की, और सर्वार्थ सिद्ध की पल के संख्यातवें भाग की है।

* १ सोवचय—वृद्धि सहित अर्थात् पहले जितने जीव हैं, उतने बने रहें, और नवीन जीवों की उत्पत्ति से संख्या बढ़ जाय, उसे सोवचय कहते हैं। २ सावचय—हानिसहित अर्थात् पहले जितने जीव हैं, उनमें से कितने ही जीवों की मृत्यु होजाने से संख्या घट जाय, उसे सावचय कहते हैं।

३ सोवचय सावचय—वृद्धि और हानि सहित अर्थात् जीवों के जन्मने से और मरने से संख्या घट जाय बढ़ जाय, या बराबर [अवस्थित) रहे उसे सोवचय सावचय कहते हैं।

४ निरुवचय निरवचय—वृद्धि और हानि रहित अर्थात् जीवों की संख्या न बढ़े और न घटे किन्तु अवस्थित रहे उसको निरुवचय निरवचय कहते हैं।

चवते भी हैं, सरीखा भी रहते हैं) ? या निरुवचया निरवचया (उपजते भी नहीं और चवते भी नहीं, अवस्थित रहते हैं) ? हे गौतम ! जीव सोवचया नहीं सावचया नहीं, सोवचया सावचया नहीं किन्तु निरुवचया निरवचया हैं।

नारकी आदि १६ दण्डक में भांगा पावे ४। पांच स्थावर में भांगा पावे १ (सोवचया सावचया)। सिद्ध भगवान् में भांगा पावे २—पहला और चौथा।

२—स्थिति आसरी समुच्चय जीव और ५ स्थावर की स्थिति सव्वद्धा (सर्व काल)। १६ दण्डक में भांगा पावे ४, प्रथम तीन भांगों की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग की है। चौथे भांगे की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट अपने अपने विरहकाल जितनी है। सिद्ध भगवान् में भांगा पावे दो—पहला, चौथा। पहले भांगे की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट ८ समय की है। चौथे भांगे की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट ६ मास की है।

३—वड्ढमाण में भांगा पावे २—पहला, तीसरा (सोवचया, सोवचया सावचया)। हायमान में भांगा पावे २—दूसरा और तीसरा (सावचया, सोवचया सावचया)। अवट्ठिया में भांगा पावे २—तीसरा और चौथा (सोवचया सावचया, निरुवचया निरवचया)।

४–सोवचया में भांगो पावे १ वड्ढमाण। सावचया में भांगो पावे १–हायमान। सोवचया सावचया में भांगा पावे ३–वड्ढमाण, हायमान, अवड्ढिया। निरुपचय निरवचया में भांगो पावे १–अवड्ढिया)

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ४५)

श्री भगवतीजी सूत्र के पांचवें शतक के नवमे उद्देशे में 'राजगृह नगर' आदि का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

किमियं रायगिहं ति य, उज्जोए अंधयार समए य।
पासंति वासि पुच्छा, राइंदिय देवलोगा य॥ १॥

१–अहो भगवान् ! राजगृह नगर किसको कहना चाहिए ? हे गौतम ! राजगृह नगर में पृथ्वी आदि सचित्त अचित्त मिश्र द्रव्य हैं जीव अजीव त्रस स्थावर जितनी वस्तुएं हैं उनको राजगृह नगर कहना चाहिए।

२–अहो भगवान् ! क्या दिन में उद्योत (प्रकाश) और रात्रि में अन्धकार होता है ? हाँ, गौतम ! होता है। अहो भगवान् ! इसका क्या कारण है ? हे गौतम ! दिन के शुभ पुद्गल हैं वे शुभ पुद्गलपणे परिणमते हैं, इसलिए दिन में उद्योत होता है। रात्रि के पुद्गल अशुभ हैं, वे अशुभ पुद्गलपणे परिणमते हैं। इसलिए रात्रि में अन्धकार होता है।

दण्डक के जीवां आसरी—नरकगति, ५ स्थावर, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय इन ८ दण्डक के जीवों के अशुभ पुद्गल हैं, अशुभ पुद्गलपने परिणमते हैं, इसलिए अन्धकार है। देवता के १३ दण्डक में शुभ पुद्गल हैं, वे शुभ पुद्गलपने परिणमते हैं, इसलिए उद्योत है। चोइन्द्रिय, तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय और मनुष्य इन तीन दण्डकों में शुभाशुभ पुद्गल हैं, वे शुभाशुभ पुद्गलपने परिणमते हैं, इसलिए उद्योत और अन्धकार दोनो ही हैं।

३—अहो भगवान्! क्या जीव समय, आवलिका यावत् उत्सर्पिणी अवसर्पिणी को जानते हैं? हे गौतम! २३ दण्डक (मनुष्य का एक दण्डक छोड़कर) के जीव अपने अपने स्थान पर रहे हुए समय, आवलिका यावत् उत्सर्पिणी अवसर्पिणी को नहीं जानते हैं क्योंकि समय आदि का मान प्रमाण मनुष्य लोक में ही है। मनुष्य लोक में रहा हुआ मनुष्य समय, आवलिका यावत् उत्सर्पिणी अवसर्पिणी काल को जानता है क्योंकि काल का मान, प्रमाण, सूर्य का उदय अस्त, दिन रात मनुष्य-क्षेत्र में ही है।

४—तेईसवें तीर्थङ्कर भगवान् पार्श्वनाथ स्वामी के शिष्य स्थविर मुनियों ने श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास आकर इस प्रकार पूछा कि—अहो भगवान्! क्या असंख्याता लोक में अनन्ता रात्रि दिवस उत्पन्न हुए? उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न होवेंगे? नष्ट हुए, नष्ट होते हैं और नष्ट होवेंगे? परित्ता (निश्चित

परिमाण वाला) रात्रि दिवस उत्पन्न हुए, उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न होवेंगे ? नष्ट हुए, नष्ट होते हैं और नष्ट होवेंगे ? भगवान् ने उत्तर दिया कि—हाँ, आर्यों! उत्पन्न हुए यावत् नष्ट होवेंगे। अहो भगवान्! इसका क्या कारण है ? हे आर्यों! पुरुषादानीय (पुरुषों में माननीय) पार्श्व नाथ अरिहन्त ने लोक को शाश्वत, अनादि, अनन्त कहा है। यह लोक नीचे चौड़ा, बीच में संकड़ा और ऊपर विशाल है, असंख्य योजन का लम्बा चौड़ा है, अलोक से आवृत्त (घिरा हुआ) है। ऐसे सर्व लोक में अनन्ता (साधारण) परित्ता (प्रत्येक) जीवों ने जन्म मरण किये, करते हैं, करेंगे। उन जीवों की अपेक्षा असंख्याता लोक में अनन्ता परित्ता रात्रिदिवस उत्पन्न हुए यावत् विनष्ट होवेंगे। जहाँ तक जीव पुद्गलों की गति (गमन) है वहाँ तक लोक है और जहाँ तक लोक है वहीं तक जीव पुद्गलों की गति (गमन) होती है।

श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के ये वचन सुन कर उन स्थविर मुनियों ने भगवान् महावीर स्वामी को वन्दना नमस्कार करके चार जाम (चार महाव्रत) धर्म से पंच जाम (पांच महाव्रत) रूप धर्म *सप्रतिक्रमण (प्रतिक्रमण सहित) अङ्गीकार

---

*सपडिक्कमणो धम्मो, पुरिमस्स य पच्छिमस्स य जिणस्स।
मज्झिमगाणं जिणाणं, कारणजाए पडिक्कमणं॥

अर्थ—प्रथम तीर्थंकर और अन्तिम तीर्थङ्कर के साधुओं को प्रतिदिन सुबह शाम दोनों वक्त और पाक्षिक चौमासिक सांवत्सरिक प्रति-

किया। तप संयम से आत्मा को भावते हुए विचरने लगे। उन स्थविर मुनियों में से कितनेक मोक्ष गये और कितनेक देवलोक में गये।

५—श्री गौतम स्वामी ने पूछा कि—अहो भगवान्! देवलोक कितने प्रकार के हैं? हे गौतम! देवलोक चार प्रकार के हैं—भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी, वैमानिक। भवनपति १० प्रकार के हैं, वाणव्यन्तर ८ प्रकार के, ज्योतिषी ५ प्रकार के और वैमानिक २ प्रकार के हैं।❀

सेवं भंते! सेवं भंते!!

(थोकड़ा नं० ४६)

श्री भगवतीजी सूत्र के छठे शतक के पहले उद्देशे में 'वेदना निर्जरा' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

महावेयणे य वत्थे, कद्दमखंजण कए य अहिगरणी।
तणहत्थे य कवल्ले, करण महावेयणा जीवा॥

१—अहो भगवान्! क्या जो महावेदना वाला है वह महा निर्जरा वाला है और जो महानिर्जरा वाला है वह महा-

---

क्रमण करना जरूरी (आवश्यक) है। बीच के २२ तीर्थङ्करों के साधु दोष लगने पर प्रतिक्रमण करते हैं। उन्हें प्रतिदिन प्रतिक्रमण करने की आवश्यकता नहीं है। लेकिन उठती चौमासी और संवत्सरी का प्रतिक्रमण करना जरूरी है।

❀ देवों सम्बन्धी विस्तार जम्बूद्वीपपन्नति आदि सूत्रों में है।

वेदना वाला है ? हाँ, गौतम ! जो महावेदना वाला है वह महा-निर्जरा वाला है और जो महा निर्जरा वाला है वह महावेदना वाला है।

२—अहो भगवान् ! क्या महावेदना वाले और अल्प वेदना वाले जीवों में जो जीव प्रशस्त निर्जरा वाला है वह श्रेष्ठ है ? हाँ, गौतम ! महावेदना वाले और अल्प वेदना वाले जीवों में जो जीव प्रशस्त निर्जरा वाला है वह श्रेष्ठ है।

३—अहो भगवान् ! क्या छठी नरक के और सातवीं नरक के नेरीया श्रमण निर्ग्रन्थों से महानिर्जरा वाले हैं ? हे गौतम ! णो इणट्ठे समट्ठे (यह बात नहीं है)। अहो भगवान् ! इसका क्या कारण है ? हे गौतम ! जैसे दो वस्त्र हैं, उनमें से एक तो कर्दम (कीचड़) के रंग से रंगा हुआ है, महा चिकनाई के कारण पक्का रंग लगा हुआ है और एक वस्त्र खंजन (काजल) के रंग में रंगा हुआ है, चिकनाई नहीं लगी हुई है। हे गौतम ! इन दोनों वस्त्रों में से कौन सा वस्त्र कठिनता से धोया जाता है, कठिनता से दाग छुड़ाये जाते हैं, कठिनता से उज्ज्वल (निर्मल) किया जाता है और कौन सा वस्त्र सुखपूर्वक धोया जाता है यावत् सुखपूर्वक निर्मल किया जाता है ? अहो भगवान् ! कर्दम रंग से रंगा हुआ वस्त्र कठिनता से धोया जाता है यावत् कठिनता से निर्मल होता है और खंजन रंग से रंगा हुआ वस्त्र सुखपूर्वक धोया जाता है यावत्

सुखपूर्वक निर्मल होता है। हे गौतम! इसी तरह नेरीयों के कर्म गाढ़े, चिकने श्लिष्ट खिलीभूत (निकाचित) किये हुए हैं जिससे महावेदना वेदते हैं तो भी श्रमण निर्ग्रन्थों की अपेक्षा महानिर्जरा नहीं कर सकते हैं। हे गौतम! जैसे खंजन से रंगा हुआ वस्त्र सुखपूर्वक धोया जाता है, इसी तरह श्रमण निर्ग्रन्थों के कर्म तप संयम ध्यानादि से पतले शिथिल निर्बल असार किये हुए हैं जिससे अल्प वेदना वेदते हैं तो भी महा-निर्जरा करते हैं। जैसे सूखे हुए घास में अग्नि डालने से घास तुरन्त भस्म हो जाता है। तथा गर्म धगधगते लोह के गोले पर जल की बूंद डालने से वह बूंद तुरन्त भस्म हो जाती है इसी तरह श्रमण निर्ग्रन्थ महा निर्जरा करते हैं।

अहो भगवान्! जीव महावेदना महानिर्जरा किससे करता है? हे गौतम! करण से करता है। अहो भगवान्! करण कितने प्रकार का है? हे गौतम! करण चार प्रकार का है— १ मन करण, २ वचन करण, ३ काया करण, ४❀कर्म करण। नारकी में करण पावे ४ अशुभ, अशुभकरण से असातावेदना वेदते हैं, कदाचित् साता वेदना भी वेदते हैं। देवता में करण पावे ४ शुभ, शुभ करण से साता वेदना वेदते हैं, कदाचित् असाता वेदना भी वेदते हैं। पाँच स्थावर में करण पावे २

❀ कर्म करण—कर्मों के बन्धन संक्रमण आदि में निमित्त भूत जीव का वीर्य कर्मकरण कहलाता है।

(काया करण, कर्म करण)। तीन विकलेन्द्रिय में करण पावे ३ (काया करण, वचन करण, कर्म करण)। तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय में और मनुष्य में करण पावे ४। इन औदारिक के १० दण्डक में शुभाशुभ करण से वेमायाए (विमात्रा–विचित्र प्रकार से अर्थात् कभी साता कभी असाता) वेदना वेदते हैं।

जीवों आसरी वेदना और निर्जरा के ४ भांगे होते हैं— १ महावेदना महानिर्जरा, २ महावेदना अल्पनिर्जरा, ३ अल्प वेदना महानिर्जरा, ४ अल्प वेदना अल्पनिर्जरा। पहले भांगे में पडिमाधारी साधु हैं, दूसरे भांगे में छठी सातवीं नरक के नेरीया हैं। तीसरे भांगे में शैलेशी प्रतिपन्न (चौदहवें गुणस्थान वाले) अनगार हैं। चौथे भांगे में अनुत्तर विमान के देवता हैं।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ४७)

श्री भगवतीजी सूत्र के छठे शतक के तीसरे उद्देशे में 'कर्मबन्ध' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१–अहो भगवान् ! क्या महाकर्मी, महा क्रियावन्त महा आश्रवी, महावेदनावंत जीव के सब दिशाओं से कर्म पुद्गल आकर आत्मा के साथ बंधते हैं, चय उपचय होते हैं ? सदा निरन्तर बंधते हैं, चय उपचय होते हैं उन कर्मों के मैल से

आत्मा निरन्तर दूरूपपने दुवर्णादि १७ बोल ❀ मलीनपने बारम्बार परिणमता है ? हाँ, गौतम ! बंधता है यावत् परिणमता है। अहो भगवान् ! इसका क्या कारण ? हे गौतम ! जैसे नये कपड़े को हमेशा पहनने से, काम में लेते रहने से वह वस्त्र मैला मलीन हो जाता है। इसी तरह आरम्भादि १८ पापों में प्रवृत्ति करता हुआ जीव कर्मों के मैल से मलीन होता है।

२—अहो भगवान् ! क्या अल्पकर्मी, अल्प क्रियावन्त, अल्प आश्रवी, अल्प वेदनावन्त जीव के कर्म सदा आत्मा से अलग होते हैं ? छेदाते भेदाते क्षय होते हैं ? हाँ, गौतम ! होते

❀ १७ बोल इस प्रकार हैं—

दूरूवत्ताए, दुवण्णत्ताए, दुगंधत्ताए, दूरसत्ताए, दुफासत्ताए, अणिट्ठत्ताए, अकंत, अप्पिय, असुभ, अमणुण्ण, अमणामत्ताए, अणिच्छियत्ताए, अभिज्झियत्ताए, अहत्ताए, णो उड्ढत्ताए दुक्खत्ताए, णो सुहत्ताए, भुज्जो भुज्जो परिणमंति।

अर्थ—१ दूरूपपने (खराब रूपपने), दुर्वर्णपने (खराब वर्णपने), ३ दुर्गन्धपने, ४ दुरसपने, ५ दुःस्पर्शपने, ६ अनिष्टपने, ७ अकान्तपने (असुन्दरपने), ८ अप्रियपने, ९ अशुभपने (अमंगलपने), १० अमनोज्ञपने (जो मन को सुन्दर न लगे), ११ अमनामपने (मन में स्मरण करने मात्र से ही जिस पर अरुचि पैदा हो), १२ अनिच्छितपने (अनभीप्सितपने--जिसको प्राप्त करने की इच्छा ही न हो), १३ अभिज्झियतपने (जिसको प्राप्त करने का लोभ भी न हो), १४ अहत्ताए (जघन्यपने-भारीपने), १५ णो उड्ढत्ताए--ऊर्ध्वपने नहीं (लघुपने नहीं), १६ दुक्खत्ताए-दुःखपने, १७ णो सुहत्ताए--सुखपने नहीं।

हैं। अहो भगवान् ! इसका क्या कारण ? हे गौतम ! जैसे मलीन वस्त्र को शुद्ध पानी से धोने से मैल कट कर वस्त्र उजला सफेद हो जाता है यावत् सुरूप सुवर्णादि १७ बोल शुभपने परिणमते हैं। इसी तरह जीव तप संयम ध्यानादि से कर्मों को छेदते भेदते क्षय करते हैं, यावत् सुरूप सुवर्णादि १७ बोल शुभपने परिणमते हैं।

३—अहो भगवान् ? वस्त्र के पुद्गलों का जो उपचय होता है क्या वह प्रयोग से (पुरुष के प्रयत्न से) होता है या स्वाभाविक रीति से होता है ? हे गौतम ! प्रयोग से भी होता है और स्वाभाविक रीति से भी होता है।

४–अहो भगवान् ! जिस तरह वस्त्रके प्रयोग से और स्वाभाविक रीति से पुद्गलों का जो उपचय होता है यानी मैल लगता है, क्या उसी तरह से जीवों के जो कर्मों का उपचय होता है वह प्रयोग से और स्वाभाविक रीति से दोनों तरह से होता है ? हे गौतम ! जीव के कर्मों का उपचय प्रयोग से होता है किन्तु स्वाभाविक रीति से नहीं होता अर्थात् जीव के कर्म प्रयोग से लगते हैं, स्वाभाविक रूप से नहीं लगते। अहो भगवान् ! इसका क्या कारण ? हे गौतम ! जीवों के तीन प्रकार के प्रयोग कहे गये हैं—१ मन प्रयोग, २ वचन प्रयोग, ३ काय प्रयोग। इन प्रयोगों से जीव कर्मों का बन्ध करता है। एकेन्द्रिय में प्रयोग पावे एक (काया प्रयोग)। विकलेन्द्रिय में प्रयोग पावे

दो (काया प्रयोग, वचन प्रयोग)। पंचेन्द्रिय में प्रयोग पावे तीनों ही।

५–अहो भगवान् ! वस्त्र के मैल और कर्मों की स्थिति कितनी है ? हे गौतम ! स्थिति आसरी ४ भांगे हैं—

१ सादि सान्त (आदि अन्त सहित)।
२ सादि अनन्त (आदि सहित, अन्त रहित)।
३ अनादि सान्त (आदि रहित, अन्त सहित)।
४ अनादि अनन्त (आदि अन्त रहित)।

वस्त्र के मैल की स्थिति में भांगा पावे १ (सादि सान्त)। जीव के कर्मों की स्थिति में भांगा पावे ३–पहला, तीसरा, चौथा। ईर्यावही क्रिया की स्थिति में भांगा पावे १ (सादि सान्त)। भवी * जीव के कर्मों की स्थिति में भांगा पावे १ (अनादि सान्त)। अभवी × जीव के कर्मों की स्थिति में भांगा पावे १ (अनादि अनन्त)। किसी भी जीव के कर्मों की स्थिति सादि अनन्त नहीं है।

वस्त्र द्रव्य सादि सान्त है। जीव द्रव्य आसरी भांगा पावे चारों ही—१ चारों गति के जीव गतागत करते हैं, इसलिये

* भवी—जिस जीव में मोक्ष जाने की योग्यता होती है उसे भवी (भव्य) कहते हैं।

× अभवी—जिस जीव में मोक्ष जाने की योग्यता नहीं होती, उसको अभवी (अभव्य) कहते हैं।

सादि सान्त हैं, २–सिद्धगति की अपेक्षा सिद्ध जीव सादि अनन्त हैं, ३ भव सिद्धिक लब्धि की अपेक्षा अनादि सान्त हैं, ४ अभव सिद्धिक जीव संसार की अपेक्षा अनादि अनन्त हैं।

६–अहो भगवान् ! कर्म कितने हैं ? हे गौतम कर्म आठ हैं—१ ज्ञानावरणीय, २ दर्शनावरणीय, ३ वेदनीय, ४ मोहनीय, ५ आयुष्य, ६ नाम, ७ गोत्र, ८ अन्तराय।

७–अहो भगवान् ! कर्मों की बन्धस्थिति कितनी कही गई है ? हे गौतम ! ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, अन्तराय इन तीन कर्मों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट ३०–३० कोडाकोडी सागर की, वेदनीय की जघन्य स्थिति दो समय की, उत्कृष्ट ३० कोडाकोडी सागर की, इन चारों कर्मों का अबाधा काल ३–३ हजार वर्ष का है। मोहनीय की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की, उत्कृष्ट ७० कोडाकोडी सागर की है अबाधा काल ७ हजार वर्ष का है। आयुकर्म की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की, उत्कृष्ट ३३ सागर कोडपूर्व का तीसरा भाग अधिक। नामकर्म और गोत्रकर्म की स्थिति जघन्य ८ मुहूर्त की, उत्कृष्ट २० कोडाकोडी सागर की, अबाधाकाल २ हजार वर्ष का है।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ४८)

श्री भगवतीजी सूत्र के छठे शतक के तीसरे उद्देशे में '५० बोलों की बन्धी' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

वेय संजय दिट्ठि, सरणी भवि दंसण पज्जत्ते।
भासग परित्तणाण, जोगुवओग आहार सुहुम चरमेसु॥

१ वेद द्वार, २ संजत (संयत) द्वार, ३ दृष्टि द्वार, ४ संज्ञी द्वार, ५ भवी द्वार, ६ दर्शन द्वार, ७ पर्याप्त द्वार, ८ भाषक द्वार, ९ परित्त (पड़त) द्वार, १० ज्ञान द्वार, ११ योग द्वार, १२ उपयोग द्वार, १३ आहारक द्वार, १४ सूक्ष्म द्वार, १५ चरम द्वार।

१–वेद द्वार के ४ भेद—स्त्रीवेद, पुरुषवेद, नपुंसकवेद, अवेदी। २–संजत द्वार के ४ भेद—संजति, असंजति, संजतासंजति, नोसंजति नो असंजति नो संजतासंजति। ३ दृष्टि-द्वार के ३ भेद—सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि। ४ संज्ञी (सन्नी) द्वार के ३ भेद—संज्ञी, असंज्ञी, नोसंज्ञी नो-असंज्ञी। ५ भवीद्वार के ३ भेद–भवसिद्धिक, अभवसिद्धिक, नो भवसिद्धिक नो अभवसिद्धिक। ६ दर्शनद्वार के ४ भेद चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन, केवलदर्शन। ७ पर्याप्त द्वार के ३ भेद—पर्याप्ता, अपर्याप्ता, नो पर्याप्ता नो अपर्याप्ता। ८ भाषक द्वार के २ भेद—भाषक, अभाषक। ९ परित्त द्वार के ३ भेद—परित्त (पड़त), अपरित्त (अपड़त), नोपरित्त नो अपरित्त (नो पड़त नो अपड़त)। १० ज्ञानद्वार के ८ भेद—मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्ययज्ञान, केवलज्ञान, मति अज्ञान, श्रुतअज्ञान, विभंगज्ञान। ११ योगद्वार के ४ भेद—मन योग, वचन योग, काया योग, अयोगी। १२ उपयोग द्वार के

२ भेद—सागारवउता (साकारोपयोग-ज्ञान) अणागारवउता (अनाकारोपयोग-दर्शन)। १३ आहारक द्वार के दो भेद—आहारक, अनाहारक। १४ सूक्ष्मद्वार के ३ भेद—सूक्ष्म, बादर, नो सूक्ष्म नो बादर। १५ चरम द्वार के २ भेद—चरम, अचरम। ये कुल ५० बोल हुए।

इनमें से जिन जिन जीवों में जितने जितने बोल पाये जाते हैं सो समुच्चय (धड़ा) रूप से कहे जाते हैं—पहली नारकी में बोल पावे ३४। शेष ६ नारकी में बोल पावे ३३-३३। भवनपति वाणव्यन्तर देवों में बोल पावे ३५। ज्योतिषी देवों में तथा पहले दूसरे देवलोक में बोल पावे ३४। तीसरे से बारहवें देवलोक तक बोल पावे ३३। नवग्रैवेयक में बोल पावे ३२। पांच अनुत्तर विमानों में बोल पावे २६-२६। पांच स्थावर में बोल पावे २३, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय में बोल पावे २७। चौइन्द्रिय में और असन्नी तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय में बोल पावे २८—२८। सन्नी तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय में बोल पावे ३६। असन्नी मनुष्य में बोल पावे २२। सन्नी मनुष्य में बोल पावे ४५। सिद्ध भगवान् में बोल पावे १६। समुच्चय जीव में बोल पावे ५०।

यन्त्र

नाम	बोल	नाम	बोल	नाम	बोल
पहली नारकी में	३४	बारहवें देवलोक		चौइन्द्रिय, असन्नी	
दूसरी से सातवीं		तक	३३	तिर्यञ्च पंचेन्द्रियमें	२८
नारकी तक	३३	नवग्रैवेयक में	३२	सन्नी तिर्यञ्च	
भवनपति,		पांच अनुत्तर		पंचेन्द्रिय में	३६
वाणव्यन्तर में	३५	विमान में	२६	असन्नी मनुष्य में	२२
ज्योतिषी पहला		पांच स्थावर में	२३	सन्नी मनुष्य में	४५
दूसरा देवलोक में	३४	वेइन्द्रिय		समुच्चय जीव में	५०
तीसरे से		तेइन्द्रिय में	२७		

५० बोलों में से किस बोल में कितने कर्मों का बन्ध होता है सो कहते हैं—

१—वेद द्वार—तीन वेदों में ७ कर्मों की नियमा, आयुकर्म की भजना। अवेदी में ७ कर्मों की भजना, आयुकर्म का अबन्ध।

२—संजतद्वार—संजति में ८ कर्मों की भजना। असंजति, संजतासंजति में ७ कर्मों की नियमा, आयुकर्म की भजना। नो संजति नो असंजति नो संजतासंजति में ८ कर्मों का अबन्ध।

३—दृष्टि द्वार—समदृष्टि में ८ कर्मों की भजना। मिथ्या-दृष्टि में ७ कर्मों की नियमा, आयुकर्म की भजना। मिश्रदृष्टि में ७ कर्मों की नियमा, आयुकर्म का अबन्ध।

४–संज्ञी (सन्नी) द्वार—संज्ञी में ७ कर्मों की भजना, वेदनीय की नियमा। असंज्ञी में ७ कर्मों की नियमा, आयुकर्म की भजना। नोसंज्ञी नो असंज्ञी में वेदनीय की भजना, ७ कर्मों का अबन्ध।

५–भवी द्वार—भवी में ८ कर्मों की भजना। अभवी में ७ कर्मों की नियमा, आयुकर्म की भजना। नो भवी नो अभवी में ८ कर्मों का अबन्ध।

६–दर्शनद्वार–तीन दर्शन (चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन) में ७ कर्मों की भजना, वेदनीय की नियमा। केवल दर्शन में वेदनीय की भजना, ७ कर्मों का अबन्ध।

७–पर्याप्तद्वार–पर्याप्ता में ८ कर्मों की भजना। अपर्याप्ता में ७ कर्मों की नियमा, आयुकर्म की भजना। नो पर्याप्ता नो अपर्याप्ता में ८ कर्मों का अबन्ध।

८–भाषकद्वार—भाषक में ७ कर्मों की भजना, वेदनीय की नियमा। अभाषक में ८ कर्मों की भजना।

९–परित्त (पड़त) द्वार—परित्त (पड़त) में ८ कर्मों की भजना। अपरित्त (अपड़त) में ७ कर्मों की नियमा, आयु-कर्म की भजना। नोपरित्त नोअपरित्त (नोपड़त नो अपड़त) में ८ कर्मों का अबन्ध।

१०–ज्ञान द्वार–चार ज्ञान में ७ कर्मों की भजना, वेदनीय की नियमा। केवलज्ञान में वेदनीय की भजना, ७ कर्मों का

अबन्ध । तीन अज्ञान में ७ कर्मों की नियमा, आयुकर्म की भजना ।

११–योगद्वार—तीन योग में ७ कर्मों की भजना, वेदनीय की नियमा । अयोगी (अजोगी) में ८ कर्मों का अबन्ध ।

१२–उपयोग द्वार–सागरवउत्ता अणागारवउत्ता (साकारोपयोग, अनाकारोपयोग) में ८ कर्मों की भजना ।

१३–आहारक द्वार—आहारक में ७ कर्मों की भजना, वेदनीय की नियमा । अनाहारक में ७ कर्मों की भजना, आयुकर्म का अबन्ध ।

१४–सूक्ष्म द्वार–सूक्ष्म में ७ कर्मों की नियमा, आयुकर्म की भजना । बादर में ८ कर्मों की भजना । नो सूक्ष्म नो बादर में ८ कर्मों का अबन्ध ।

१५–चरम द्वार–चरम और अचरम में ७ कर्मों की भजना।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ४९)

श्री भगवतीजी सूत्र के छठे शतक के चौथे उद्देशे में 'काला देश' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

सपएसा आहारग भविय सण्णी, लेस्सा दिट्ठि संजय कसाए ।
णाणे जोगुवओगे, वेदे य सरीर पज्जत्ती ॥ १ ॥

१ सप्रदेश द्वार, २ आहारक द्वार, ३ भव्य द्वार, ४ संज्ञी द्वार, ५ लेश्या द्वार, ६ दृष्टि द्वार, ७ संयत द्वार, ८ कषाय

द्वार, ६ ज्ञान द्वार, १० योग द्वार, ११ उपयोग द्वार, १२ वेद द्वार, १३ शरीर द्वार, १४ पर्याप्ति द्वार।

१—सप्रदेश द्वार—अहो भगवान्! क्या जीव ※सप्रदेशी है या +अप्रदेशी (पहिले समयरा उत्पन्न हुवा) है? हे गौतम! सप्रदेशी अप्रदेशी के ६ भांगे होते हैं—१ सिय सप्रदेशी, २ सिय अप्रदेशी, ३ सप्रदेशी एक अप्रदेशी एक, ४ सप्रदेशी एक अप्रदेशी बहुत (घणा), ५ सप्रदेशी बहुत (घणा) अप्रदेशी एक, ६ सप्रदेशी बहुत (घणा) अप्रदेशी बहुत (घणा)।

समुच्चय जीव काल आसरी—एक जीव और बहुत जीव नियमा सप्रदेशी। २४ दण्डक के जीव, सिद्ध भगवान् काल आसरी—एक जीव सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी। बहुत जीव आसरी—एकेन्द्रिय को छोड़ कर तीन भांगे होते हैं—१ सब सप्रदेशी (सव्वे वि ताव हुज्जा सपएसा), २ सप्रदेशी बहुत अप्रदेशी एक, ३ सप्रदेशी बहुत, अप्रदेशी बहुत। एकेन्द्रिय में भांगा पावे १ तीसरा (सप्रदेशी बहुत अप्रदेशी बहुत)।

२—आहारक द्वार—अहो भगवान्! क्या आहारक सप्रदेशी है या अप्रदेशी है? हे गौतम! आहारक समुच्चय जीव,

※ जिसको उत्पन्न हुवे को २-२ या ज्यादा समय होगया है उसे सप्रदेशी कहते हैं।

+ जिसको उत्पन्न हुवे को १ समय ही हुवा है उसे अप्रदेशी कहते हैं।

शाश्वते बोल हैं उनमें ३ भांगे होते हैं और अशाश्वते में ६ भांगे होते हैं।

२४ दण्डक–एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी। बहुत जीव आसरी–जीव एकेन्द्रिय को छोड़ कर तीन भांगे होते हैं। जीव एकेन्द्रिय में भांगा पावे एक–तीसरा (सप्रदेशी बहुत अप्रदेशी बहुत)। अनाहारक–समुच्चय जीव २४ दण्डक–एक जीव सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी। बहुत जीव आसरी–जीव एकेन्द्रिय को छोड़ कर छह भांगे होते हैं। जीव एकेन्द्रिय में भांगा पावे १ तीसरा। सिद्ध भगवान् आसरी–एक जीव सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी तीन भांगे होते हैं।

३—भव्य (भवी) द्वार–अहो भगवान्! क्या भवी जीव सप्रदेशी है या अप्रदेशी ? हे गौतम! भवी और अभवी एक जीव और बहुत जीव नियमा सप्रदेशी हैं। २४ दण्डक के जीव भवी अभवी–एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी। बहुत जीव आसरी एकेन्द्रिय को छोड़ कर तीन भांगे पाये जाते हैं। एकेन्द्रिय में भांगा पावे १ तीसरा। नोभवी नोअभवी जीव सिद्ध–एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी तीन भांगे पाये जाते हैं।

४—संज्ञीद्वार–संज्ञी समुच्चय जीव, १६ दण्डक–एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी–जीव और १६ दण्डक में तीन तीन भांगे होते हैं। असंज्ञी समुच्चय जीव २२ दण्डक–एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी। बहुत जीव आसरी–समुच्चय जीव तीन विकलेन्द्रिय और तिर्यंच

पंचेन्द्रिय इनमें भांगा पावे तीन तीन। एकेन्द्रिय में भांगा पावे १ तीसरा। नारकी देवता मनुष्य में भांगे पावे छह छह। नो संज्ञी नो-असंज्ञी जीव, मनुष्य, सिद्ध एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी। बहुत जीव आसरी जीव, मनुष्य, सिद्धों में तीन तीन भांगे होते हैं।

५—लेश्या द्वार–अहो भगवान्! क्या सलेशी सप्रदेशी है या अप्रदेशी है? हे गौतम! सलेशी समुच्चय जीव में–एक जीव बहुत जीव आसरी नियमा सप्रदेशी। २४ दण्डक के जीव और सिद्ध भगवान् में–एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी। बहुत जीव आसरी–एकेन्द्रिय को छोड़ कर तीन तीन भांगे होते हैं, एकेन्द्रिय में एक–तीसरा भांगा होता है। कृष्ण नील कापोतलेशी समुच्चय जीव, २२ दण्डक में एक जीव सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी। बहुत जीव आसरी–जीव एकेन्द्रिय को छोड़ कर तीन तीन भांगे होते हैं। जीव एकेन्द्रिय में भांगा पावे १ तीसरा। तेजो लेशी समुच्चय जीव, १८ दण्डक में–एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी। बहुत जीव आसरी–समुच्चय जीव और १५ दण्डक में तीन तीन भांगे होते हैं। पृथ्वी पानी वनस्पति में छह छह भांगे होते हैं। पद्म-लेशी शुक्ललेशी समुच्चय जीव, ३ दण्डक में–एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी तीन तीन भांगे होते हैं। अलेशी जीव, मनुष्य सिद्ध में–एक जीव आसरी सिय

सप्रदेशी सिय अप्रदेशी। बहुत जीव आसरी--जीव और सिद्ध में तीन तीन भांगे होते हैं, मनुष्य में छह भांगे होते हैं।

६ दृष्टिद्वार—समदृष्टि, समुच्चय जीव १६ दण्डक सिद्ध भगवान् में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी तीन भांगे होते हैं, नवरं तीन विकलेन्द्रिय में छह भांगे होते हैं। मिथ्यादृष्टि, समुच्चय जीव २४ दण्डक में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी। बहुत जीव आसरी–एकेन्द्रिय को छोड़ कर समुच्चय जीव, १६ दंडक में तीन तीन भांगे होते हैं। एकेन्द्रिय में १ तीसरा भांगा होता है। सम्यग्मिथ्यादृष्टि (मिश्रदृष्टि), समुच्चय जीव. १६ दण्डक आसरी एक जीव सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी छह छह भांगे होते हैं।

७ संयत द्वार—संजति में समुच्चय जीव मनुष्य, संजतासंजति में समुच्चय जीव मनुष्य, तिर्यञ्च एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी तीन तीन भांगे होते हैं। असंजति, समुच्चय जीव २४ दण्डक में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी–एकेन्द्रिय को छोड़ कर समुच्चय जीव, १९ दंडक में तीन-तीन भांगे होते हैं, एकेन्द्रिय में १ तीसरा भांगा होता है। नो संजति नो असंजति नो संजतासंजति जीव सिद्ध भगवान् एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी तीन भांगे होते हैं।

८ कषाय द्वार—सकषायी समुच्चय जीव २४ दण्डक में ; जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव सरी एकेन्द्रिय को छोड़ कर* समुच्चय जीव १६ दण्डक तीन तीन भांगे, एकेन्द्रिय में एक तीसरा भांगा। क्रोधकषायी ुच्चय जीव २४ दण्डक में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी, य अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी जीव एकेन्द्रिय को छोड़ कर न तीन भांगे, जीव एकेन्द्रिय में तीसरा भांगा नवरं देवता छह भांगे। मानकषायी मायाकषायी समुच्चय जीव, २४ दण्डक एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी व एकेन्द्रिय को छोड़ कर तीन तीन भांगे, जीव एकेन्द्रिय तीसरा भांगा नवरं नारकी देवता में छह २ भांगे। लोभ कषायी

* शंका—समुच्चय जीव में सकषायी आसरी तीन भांगे कहे और ध मान माया लोभ आसरी एक तीसरा भांगा ही कहा, इसका क्या रण ?

समाधान—सकषायी में अकषायीपने से आया हुआ एक जीव भी ा जा सकता है। इस कारण से तीन भांगे बनते हैं। क्रोध मान या लोभ में एकेन्द्रिय आसरी अनन्ता ही जीव क्रोध कषायी के मान-ायी और मानकषायी के मायाकषायी इत्यादि रूप से अदल बदल रूप होते रहते हैं। इस कारण से एक जीव क्रोधकषायी मानकषायी याकषायी लोभकषायी नहीं पाया जाता। इसलिए एक तीसरा भांगा ही ता है। इतनी जगह समुच्चय जीव में एकेन्द्रिय साथ में होते हुए तीन तीन भांगे हैं—१ असंज्ञी में, २ मिथ्यादृष्टि में, ३ असंयति ४ सकषायी में, ५ समुच्चय अज्ञानी, मति अज्ञानी, श्रुत अज्ञानी में, सवेदी नपुंसक वेदी में, ७ काय योगी में।

समुच्चय जीव २४ दण्डक में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी जीव एकेन्द्रिय को छोड़ कर तीन तीन भांगे, जीव एकेन्द्रिय में एक-तीसरा भांगा नवरं नारकी में छह भांगे। अकषायी जीव मनुष्य सिद्ध भगवान् में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी तीन तीन भांगे होते हैं।

९ ज्ञान द्वार— सज्ञान (समुच्चय ज्ञान) समुच्चय जीव १९ दण्डक सिद्ध भगवान् में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी तीन तीन भांगे नवरं विकलेन्द्रिय में छह भांगे होते हैं। मतिज्ञान, श्रुतज्ञान समुच्चय जीव १९ दण्डक में, अवधिज्ञान समुच्चय जीव १६ दण्डक में, मनःपर्यय ज्ञान, केवलज्ञान समुच्चय जीव मनुष्य में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी तीन तीन भांगे नवरं मतिज्ञान, श्रुतज्ञान में तीन विकलेन्द्रिय में छह भांगे होते हैं। समुच्चय अज्ञान, मति अज्ञान, श्रुत अज्ञान समुच्चय जीव २४ दण्डक में, विभंग ज्ञान समुच्चय जीव १६ दण्डक में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी एकेन्द्रिय को छोड़ कर तीन तीन भांगे, एकेन्द्रिय में एक तीसरा भांगा होता है।

१० योग द्वार—सयोगी में समुच्चय एक जीव आसरी बहुत जीव आसरी नियमा सप्रदेशी। २४ दण्डक में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी एके-

न्द्रिय को छोड़कर तीन तीन भांगे, एकेन्द्रिय में एक तीसरा भांगा होता है। मन योगी समुच्चय जीव १६ दण्डक में, वचन योगी समुच्चय जीव १९ दण्डक में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी तीन तीन भांगे होते हैं। काययोगी—समुच्चय जीव २४ दण्डक एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी समुच्चय जीव और १९ दण्डक में तीन तीन भांगे होते हैं और एकेन्द्रिय में एक तीसरा भांगा होता है। अयोगी जीव मनुष्य सिद्ध भगवान् में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी-बहुत जीव आसरी जीव सिद्ध भगवान् में तीन तीन भांगे, मनुष्य में छह भांगे होते हैं।

११ उपयोग द्वार—सागारवउत्ताअणागारवउत्ता (साकार उपयोग, अनाकार उपयोग), समुच्चय जीव २४ दण्डक सिद्ध भगवान् में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी जीव एकेन्द्रिय छोड़कर बाकी १९ दण्डक में तीन तीन भांगे, जीव एकेन्द्रिय में एक तीसरा भांगा होता है।

१२ वेद द्वार—सवेदी समुच्चय जीव, २४ दण्डक में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी एकेन्द्रिय को छोड़ कर समुच्चय जीव और १९ दण्डक में तीन तीन भांगे, एकेन्द्रिय में एक तीसरा भांगा होता है। स्त्रीवेद, पुरुषवेद समुच्चय जीव १५ दण्डक में, नपुंसक वेद समुच्चय

जीव ११ दण्डक में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी स्त्रीवेद पुरुषवेद में जीवादि में (समुच्चय जीव और १५ दण्डक में) तीन तीन भांगे होते हैं। नपुंसक वेद में एकेन्द्रिय को छोड़ कर समुच्चय जीव और ६ दण्डक में तीन तीन भांगे, एकेन्द्रिय में एक तीसरा भांगा होता है। अवेदी जीव मनुष्य सिद्ध भगवान् में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी तीन तीन भांगे होते हैं।

१३ शरीर द्वार—सशरीरी और तैजस कार्मण शरीर में समुच्चय एक जीव आसरी, बहुत जीव आसरी नियमा सप्रदेशी। २४ दण्डक में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी- बहुत जीव आसरी एकेन्द्रिय को छोड़कर तीन तीन भांगे, एकेन्द्रिय में एक तीसरा भांगा होता है। अशरीरी समुच्चय जीव, सिद्ध भगवान् में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी तीन तीन भांगे होते हैं। औदारिक शरीर समुच्चय जीव, १० दण्डक में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी जीव एकेन्द्रिय को छोड़कर तीन तीन भांगे, जीव एकेन्द्रिय में एक तीसरा भांगा होता है। वैक्रिय शरीर १७ दंडक में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी १६ दंडक में तीन तीन भांगे समुच्चय जीव वायुकाय में एक तीसरा भांगा होता है। आहा-

एक शरीर जीव मनुष्य में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी छह भांगे होते हैं।

१४ पर्याप्ति द्वार—आहार पर्याप्ति शरीरपर्याप्ति इन्द्रिय पर्याप्ति श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति में समुच्चय जीव, २४ दंडक में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी समुच्चय जीव एकेन्द्रिय को छोड़ कर तीन तीन भांगे, समुच्चय जीव एकेन्द्रिय में एक—तीसरा भांगा होता है। भाषा पर्याप्ति में समुच्चय जीव १९ दंडक में, मनः पर्याप्ति में समुच्चय जीव १६ दंडक में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी तीन तीन भांगे होते हैं। आहार अपर्याप्ति समुच्चय जीव, २४ दंडक में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी जीव एकेन्द्रिय को छोड़ कर छह छह भांगे, जीव एकेन्द्रिय में एक तीसरा भांगा होता है। शरीर अपर्याप्ति इन्द्रिय अपर्याप्ति श्वासोच्छ्वास अपर्याप्ति समुच्चय जीव २४ दंडक में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी जीव एकेन्द्रिय में एक—तीसरा भांगा होता है, नारकी देवता मनुष्य में छह छह भांगे होते हैं। तीन विकलेन्द्रिय और तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय में तीन तीन भांगे होते हैं। भाषा अपर्याप्ति में समुच्चय जीव, १९ दंडक में, मनः अपर्याप्ति में समुच्चय जीव १६ दंडक में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी तीन तीन भांगे नवरं नारकी देवता मनुष्य में छह छह भांगे होते हैं।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ५०)

श्री भगवतीजी सूत्र के छठे शतक के चौथे उद्देशे में 'पच्चक्खाण' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

पच्चक्खाणं जाणइ, कुव्वइ तिएणेव आउणिव्वत्ती।
सपएसुद्देसम्मि य, एमेए दंडगा चउरो ॥

१—अहो भगवान्! क्या जीव पच्चक्खाणी है, अपच्चक्खाणी है या पच्चक्खाणापच्चक्खाणी है? हे गौतम! समुच्चय जीव पच्चक्खाणी भी है, अपच्चक्खाणी भी है, पच्चक्खाणापच्चक्खाणी भी है। नारकी, देवता, पांच स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय ये २२ दंडक अपच्चक्खाणी। तिर्यंचपंचेन्द्रिय में भांगा पावे २—अपच्चक्खाणी और पच्चक्खाणापच्चक्खाणी। मनुष्य में भांगा पावे तीनों ही, समुच्चय जीव माफक कह देणा।

२—अहो भगवान्! क्या जीव पच्चक्खाण को जानता है, अपच्चक्खाण को जानता है, पच्चक्खाणापच्चक्खाण को जानता है? हे गौतम! १६ दण्डक (नारकी, देवता, तिर्यंच पंचेन्द्रिय, मनुष्य) के समदृष्टि पंचेन्द्रिय जीव तीनों ही भांगों को (पच्चक्खाण को, अपच्चक्खाण को और पच्चक्खाणापच्चक्खाण को) जानते हैं। शेष ८ दंडक (पांच स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय) के जीव तीनों ही भांगों को नहीं जानते हैं।

३—अहो भगवान्! क्या जीव पच्चक्खाण करता है, अपच्चक्खाण करता है, पच्चक्खाणापच्चक्खाण करता है? हे

गौतम ! समुच्चय जीव, मनुष्य तीनों ही भांगों को करते हैं। तिर्यंच पंचेन्द्रिय २ भांगों को (अपच्चक्खाण और पच्चक्खाणापच्चक्खाण को) करता है। शेष २२ दंडक के जीव सिर्फ एक भांगा (अपच्चक्खाण) करते हैं।

४—अहो भगवान् ! क्या जीव पच्चक्खाण में आयुष्य बांधते हैं या अपच्चक्खाण में आयुष्य बांधते हैं ? या पच्चक्खाणापच्चक्खाण में आयुष्य बांधते हैं ? हे गौतम ! समुच्चय जीव और वैमानिक देवों में उत्पन्न होने वाले जीव पच्चक्खाण आदि तीनों भांगों में आयुष्य बांधते है। शेष २३ दंडक के जीव अपच्चक्खाण में आयुष्य बांधते हैं। पच्चक्खाण की गति वैमानिक ही है।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ५१)

श्री भगवतीजी सूत्र के छठे शतक के पांचवें उद्देशे में 'तमस्काय' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! तमस्काय किस की बनी हुई है ? हे गौतम ! तमस्काय पानी की बनी हुई है।

२—अहो भगवान् ! तमस्काय कहाँ से उठी है (शुरू हुई है) और इसका अन्त कहाँ हुआ है ? हे गौतम ! इस जम्बूद्वीप के बाहर असंख्याता द्वीप समुद्रों को उल्लंघन कर आगे जाने पर अरुणवर द्वीप आता है। उसकी वेदिका के बाहर के चर-

मान्त से ४२ हजार योजन अरुणोदक समुद्र में जाने पर वहाँ जल के उपरिभाग से तमस्काया उठी है। ❀एक प्रदेशी श्रेणी १७२१ योजन ऊंची गई है। पीछे तिरछी विस्तृत होती हुई पहला दूसरा तीसरा चौथा, इन चार देवलोकों को ढक कर पांचवें ब्रह्मदेवलोक के तीसरे रिष्ट विमान पाथड़े तक चली गई है। यहाँ इसका अन्त है।

२—अहो भगवान्! तमस्काय का क्या संठाण (संस्थान) है? हे गौतम! नीचे तो शरावला (मिट्टी के दीपक) के आकार है, ऊपर कूकड़ पींजरा के आकार है।



❀ यहाँ 'एक प्रदेशी श्रेणी' का मतलब एक प्रदेश वाली श्रेणी ऐसा नहीं करना चाहिए, किन्तु यहाँ एक प्रदेशी श्रेणी का मतलब 'समभित्ति' रूप श्रेणी अर्थात् नीचे से लेकर ऊपर तक एक समान भींत (दीवाल) रूप श्रेणी है। यहाँ 'एक प्रदेश वाली श्रेणी' ऐसा अर्थ करना ठीक नहीं बैठ सकता है क्योंकि तमस्काय स्तिबुकाकार जल जीव रूप है। उन जीवों के रहने के लिये असंख्यात आकाशप्रदेशों की आवश्यकता है। एक प्रदेश वाली श्रेणी का विस्तार बहुत थोड़ा होता है। उसमें वे जल जीव कैसे रह सकते हैं? इसलिए यहाँ एक प्रदेश वाली श्रेणी ऐसा अर्थ घटित नहीं होता है किंतु 'समभित्ति रूप श्रेणी' यह अर्थ घटित होता है।

४—अहो भगवान् ! तमस्काय की लम्बाई चौड़ाई और परिधि कितनी कही गई है ? हे गौतम ! तमस्काय दो प्रकार की कही गई है—एक तो संख्याता विस्तार वाली और दूसरी असंख्याता विस्तार वाली। संख्याता विस्तार वाली तमस्काय की लम्बाई चौड़ाई संख्याता हजार योजन की है और परिधि असंख्याता हजार योजन की है। असंख्याता विस्तार वाली तमस्काय की लम्बाई चौड़ाई असंख्याता हजार योजन की है और परिधि असंख्याता हजार योजन की है।

५—अहो भगवान् ! तमस्काय कितनी मोटी है ? हे गौतम ! कोई महर्द्धिक देव, जो तीन चुटकी बजावे उतने समय में इस जम्बूद्वीप की २१ बार परिक्रमा करे, ऐसी शीघ्र गति से छह मास तक चले तो संख्याता विस्तार वाली तमस्काय का पार पावे किन्तु असंख्याता विस्तार वाली तमस्काय का पार नहीं पावे, ऐसी मोटी तमस्काय है।

६—अहो भगवान् ! तमस्काय में घर, दूकान, ग्रामादि हैं ? हे गौतम ! नहीं हैं।

७—अहो भगवान् ! तमस्काय में गाज, बीज, बादल, बरसात है ? हे गौतम ! है।

८—अहो भगवान् ! तमस्काय में गाज, बीज, बादल, बरसात कौन करते हैं ? हे गौतम ! देव, असुरकुमार, नागकुमार करते हैं।

९—अहो भगवान् ! क्या तमस्काय में बादर पृथ्वीकाय और बादर अग्निकाय है ? हे गौतम ! नहीं है परन्तु विग्रहगति

समापन्न (विग्रहगति करते हुए) बादर पृथ्वीकाय और बादर अग्निकाय के जीव हो सकते हैं।

१०—अहो भगवान्! क्या तमस्काय में चन्द्र, सूर्य ग्रह, नक्षत्र, तारा हैं? हे गौतम! चन्द्र, सूर्य आदि नहीं हैं किन्तु तमस्काय के पास में चन्द्र–सूर्य की प्रभा पड़ती है परन्तु वह अप्रभा सरीखी है।

११—अहो भगवान्! तमस्काय का वर्ण कैसा है? हे गौतम! तमस्काय का वर्ण काला भयंकर, डरावना है। कितनेक देव तमस्काय को देखते ही क्षोभ पाते हैं और अगर कोई देवता तमस्काय में प्रवेश करता है तो शरीर और मन की चंचलता से जल्दी उसको पार कर जाता है।

१२—अहो भगवान्! तमस्काय के कितने नाम हैं? हे गौतम! तमस्काय के* १३ नाम हैं—१ तम, २ तमस्काय,

---

* यहां तमस्काय के १३ नाम कहे गये हैं। उनका अर्थ इस प्रकार है—१ अन्धकार रूप होने से इसको 'तम' कहते हैं। २ अन्धकार का ढिगला (समूह) रूप होने से इसे 'तमस्काय' कहते हैं। ३ तमो रूप होने से इसे अन्धकार कहते हैं। ४ महातमो रूप होने से इसे 'महाअन्धकार' कहते हैं। ५-६ लोक में इस प्रकार का दूसरा अन्धकार न होने से इसे 'लोकान्धकार' और 'लोकतमिस्र' कहते हैं। ७–८ तमस्काय में किसी प्रकार का उद्योत (प्रकाश) न होने से वह देवों के लिए भी अन्धकार रूप है, इसलिए इसको देवअन्धकार और देवतमिस्र कहते हैं। ९ बलवान् देवता के भय से भागते हुए देवता के लिए यह एक प्रकार का जंगल रूप होने से यह शरणभूत है, इसलिए इसको 'देव अरण्य' कहते हैं। १० जिस प्रकार चक्रव्यूह का भेदन करना कठिन होता है, उसी

३ अन्धकार, ४ महाअन्धकार, ५ लोक अन्धकार, ६ लोक तमिस्र, ७ देव अन्धकार, ८ देव तमिस्र, ६ देव अरण्य, १० देव व्यूह, ११ देव परिघ, १२ देव प्रतिक्षोभ, १३ अरुणोदक समुद्र ।

१३—अहो भगवान् ! तमस्काय क्या पृथ्वी का परिणाम है, पानी का परिणाम है, जीव का परिणाम है अथवा पुद्गल का परिणाम है ? हे गौतम ! तमस्काय पृथ्वी का परिणाम नहीं है, किन्तु पानी का, जीव का और पुद्गल का परिणाम है ।

१४—अहो भगवान् ! क्या सब प्राणी भूत जीव सत्त्व तमस्काय में पृथ्वीकायपणे यावत् त्रसकायपणे पहले उत्पन्न हुए हैं ? हे गौतम ! सब प्राणी भूत जीव सत्त्व अनेक बार अथवा अनन्त बार तमस्काय में पृथ्वीकायपणे यावत् त्रसकायपणे उत्पन्न हुए हैं परन्तु बादर पृथ्वीकायपणे और बादर तेउकायपणे उत्पन्न नहीं हुए हैं ।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

प्रकार यह तमस्काया देवताओं के लिये दुर्भेद्य है, उसका पार करना कठिन है, इसलिए इसको 'देव व्यूह' कहते हैं । ११ तमस्काय को देखकर देवता भयभीत होते हैं, इसलिए वह उनके गमन में बाधक है अतः इसको 'देवपरिघ' कहते हैं । १२ तमस्काय देवताओं के लिए क्षोभ का कारण है, इसलिए इसको 'देव प्रतिक्षोभ' कहते हैं । १३ तमस्काय अरुणोदक समुद्र के पानी का विकार है, इसलिए इसको 'अरुणोदक समुद्र' कहते हैं ।

(थोकड़ा नं० ५२)

श्री भगवतीजी सूत्र के छठे शतक के पांचवें उद्देशे में '८ कृष्णराजि और लोकान्तिक देवों' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! कृष्णराजियाँ कितनी कही गई हैं ? हे गौतम ! कृष्णराजियाँ ८ कही गई हैं !

२—अहो भगवान् ! ये कृष्णराजियाँ कहाँ पर हैं ? हे गौतम ! ये पांचवें देवलोक के तीसरे रिष्ट पड़तल में हैं। पूर्व में दो, पश्चिम में दो, उत्तर में दो और दक्षिण में दो, इस तरह चार दिशाओं में ८ कृष्णराजियाँ सम चौरस अखाड़ा के आकार हैं। पूर्व दिशा की आभ्यन्तर कृष्णराजि ने दक्षिण दिशा की बाह्य कृष्णराजि को स्पर्शी है। इसी तरह चारों दिशा में परस्पर स्पर्शी है। पूर्व और पश्चिम की बाह्य कृष्णराजि छह-खुणी (छह कोणों वाली षट्कोण) है❀। दक्षिण और उत्तर की बाह्य कृष्णराजि तिखुणी (त्रिकोण) है। बाकी आभ्यन्तर की चारों ही कृष्णराजियाँ चोखुणी (चतुष्कोण) है।

३—अहो भगवान् ! कृष्णराजियों की लम्बाई, चौड़ाई और परिधि कितनी है ? हे गौतम ! संख्याता योजन की चौड़ी है, असंख्याता योजन की लम्बी है और असंख्याता योजन की परिधि है।

❀ गाथा इसप्रकार है—

पुव्वाऽवरा छलंसा, तंसा पुण दाहिणुत्तरा बज्झा ।
अब्भिंतर चउरंस, सव्वा वि य कण्हराईओ ॥

४—अहो भगवान् ? कृष्णराजियाँ कितनी मोटी हैं ? हे गौतम ! कोई महाऋद्धि का देवता जो तीन चुटकी बजावे उतने में इस जम्बूद्वीप की २१ परिक्रमा करे ऐसी तीव्र गति से अर्द्धमास (१५ दिन) तक जावे तो भी कोई कृष्णराजी का पार पावे और कोई का पार नहीं पावे, ऐसी कृष्णराजियाँ मोटी हैं ।

५—अहो भगवान् ! क्या कृष्णराजियों में घर दूकान आदि हैं ? हे गौतम ! नहीं हैं ।

६—अहो भगवान् ! क्या कृष्णराजियों में ग्रामादि हैं ? हे गौतम ! नहीं हैं ।

७—अहो भगवान् ! क्या कृष्णराजियों में गाज बीज आदि है, बरसात बरसती है ? हाँ, गौतम ! गाज बीज आदि है, बरसात भी बरसती है ।

८—अहो भगवान् ! यह गाज, बीज, बरसात कौन करता है ? हे गौतम ! यह देव (वैमानिक देव) करता है किन्तु असुरकुमार नागकुमार नही करते हैं ।

९—अहो भगवान् ! क्या कृष्णराजियों में बादर अप्काय, बादर अग्निकाय, और बादर वनस्पतिकाय हैं ? हे गौतम ! नहीं है, याने विग्रहगति समापन्न (वाटे वहता) जीव सिवाय नहीं है।

१०—अहो भगवान् ! क्या कृष्णराजियों में सूर्य, चन्द्र, ग्रह, नक्षत्र तारा हैं ? हे गौतम ! नहीं है ।

११—अहो भगवान् ! क्या कृष्णराजियों में सूर्य चन्द्रमा की प्रभा (कान्ति) है ? हे गौतम ! नहीं है।

१२—अहो भगवान् ! कृष्णराजियों का वर्ण कैसा है ? हे गौतम ! कृष्णराजियों को देख कर देवता भी भय पावे, ऐसा उनका काला वर्ण है।

१३—अहो भगवान् ! कृष्णराजियों के कितने नाम हैं ? हे गौतम ! कृष्णराजियों के ८ *नाम हैं—१ कृष्णराजि, २ मेघराजि, ३ मघा, ४ माघवती, ५ वातपरिघा, ६ वात परिखोभा, ७ देवपरिघा, ८ देवपरिखोभा।

१४—अहो भगवान् ! क्या कृष्णराजियाँ पृथ्वी का परि-

---

*यहाँ पर कृष्णराजि के ८ नाम कहे गये हैं। उनका अर्थ इस प्रकार है—१ काले पुद्गलों की रेखा को 'कृष्णराजि' कहते हैं। २ काले मेघ की रेखा के तुल्य होने से इसको 'मेघराजि' कहते हैं। ३ 'मघा' छठी नारकी का नाम है। छठी नारकी के समान अन्धकार वाली होने से इसको 'मघा' कहते हैं। ४ 'माघवती' सातवीं नरक का नाम है। सातवीं नारकी के समान अन्धकार वाली होने से इसको 'माघवती' कहते हैं। ५ कृष्णराजि वायु के समूह के समान गाढ़ अन्धकार वाली है, परिघ (आगल) के समान दुर्लंघ्य (मुश्किल से उल्लंघन करने योग्य) होने से इसको 'वातपरिघा' कहते हैं। ६ कृष्णराजि वायु के समूह के समान गाढ़ अन्धकार वाली होने से परिक्षोभ (भय) उत्पन्न करने वाली है, इसलिए इसको 'वातपरिखोभा' कहते हैं। ७ दुर्लंघ्य होने से कृष्णराजि देवताओं के लिए 'परिघ' आगल के समान है, इसलिए इसको 'देवपरिघा' कहते हैं। ८ देवताओं को भी क्षोभ (भय) उत्पन्न करने वाली होने से कृष्णराजि को 'देवपरिखोभा' कहते हैं।

णाम हैं ? पानी का परिणाम है ? जीव का परिणाम है या पुद्गल का परिणाम है ? हे गौतम ! कृष्णराजियां पानी का परिणाम नहीं हैं परन्तु पृथ्वी का, जीव का और पुद्गल का परिणाम है।

१५—अहो भगवान् ! क्या कृष्णराजियों में सब प्राणी भूत जीव सत्त्व पहले उत्पन्न हुए हैं ? हे गौतम ! सब प्राणी भूत जीव सत्त्व अनेक बार अथवा अनन्ती बार उत्पन्न हुए हैं किन्तु बादर अप्कायपने, बादर तेउकायपने और बादर वनस्पतिपने उत्पन्न नहीं हुए हैं।

१६—अहो भगवान् ! लौकान्तिक देवों के विमान कहाँ हैं ? हे गौतम ! कृष्णराजियों के ८ आन्तरों में लौकान्तिक देवों के ८ विमान हैं—१ अर्ची, २ अर्चिमाली, ३ वैरोचन, ४ प्रभंकर, ५ चन्द्राभ, ६ सूर्याभ, ७ शुक्राभ, ८ सुप्रतिष्टाभ और बीच में रिष्टाभ विमान है। इन विमानों में अनुक्रम से १ सारस्वत, २ आदित्य, ३ वह्नि, ४ वरुण, ५ गर्दतोय, ६ तुषित, ७ अव्याबाध, ८ आग्नेय, ९ रिष्ट। ये नौ जाति के देव परिवार सहित रहते हैं।

इन देवों का *परिवार—सारस्वत और आदित्य देव के ७ देवस्वामी, ७०० देव का परिवार है। वह्नि और वरुणदेव के १४ देव स्वामी और १४००० देव का परिवार है। गर्दतोय

---

* परिवार देवों की गाथा—

पढमजुगलम्मि सत्तओसयाणि, बीयम्मि चउद्दससहस्सा।
तइए सत्तसहस्सा, णव चेव सयाणि सेसेसु ॥

और तुषित देव के ७ देवस्वामी और ७००० देव का परिवार है। अव्याबाध, आग्नेय और रिष्ट देव के ९ देवस्वामी और ९०० देव का परिवार है। सब प्राणी भूत जीव सत्त्व अनेक बार अथवा अनन्तीबार लौकान्तिक देवपने उत्पन्न हुए हैं किन्तु लौकान्तिक देवीपने उत्पन्न नहीं हुए हैं*।

अहो भगवान्! लौकान्तिक विमानों में कितनी स्थिति कही गई है? हे गौतम! लौकान्तिक विमानों में ८ सागरोपम की स्थिति कही गई है।

अहो भगवान्! लौकान्तिक विमानों से लोकान्त (लोक का अन्त) कितना दूर है? हे गौतम! लौकान्तिक विमानों से असंख्य हजार योजन की दूरी पर लोकान्त है।

सेवं भंते! सेवं भंते!!

(थोकड़ा नं० ५२)

श्री भगवतीजी सूत्र के छठे शतक के छठे उद्देशे में मारणान्तिक समुद्घात करके मरने उपजने का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान्! पृथ्वियाँ कितनी कही गई हैं? हे गौतम! पृथ्वियाँ सात कही गई हैं—रत्नप्रभा यावत् तमतमाप्रभा।

२—अहो भगवान्! रत्नप्रभा में कितने नरकावासा कहे गये हैं? हे गौतम! रत्नप्रभा में ३० लाख नरकावासा कहे गये

* लौकान्तिक देवों का विस्तृत वर्णन 'जीवाभिगम सूत्र' के देवोद्देशक में है।

हैं। इस तरह सब के नरकावासा कह देना यावत् पांच अनुत्तर विमान तक कह देना चाहिए।

३—अहो भगवान्! जो जीव मारणान्तिक समुद्घात करके रत्नप्रभा नरक में नारकीपने उत्पन्न होते हैं तो क्या वे जीव वहाँ जाकर आहार करते हैं? आहार को परिणमाते हैं? और शरीर बांधते हैं? हे गौतम! कितनेक जीव* वहाँ जाकर आहार लेते हैं, परिणमाते हैं, शरीर बांधते हैं। और कितनेक जीव† वहाँ जाकर वापिस अपने पहले के शरीर में आजाते हैं और फिर दूसरी बार मारणान्तिक समुद्घात करके मर कर वापिस रत्नप्रभा नरक में नैरयिकपने उत्पन्न होकर आहार लेते हैं, परिणमाते हैं और शरीर बाँधते हैं। इसी तरह यावत् तमतमा-प्रभा तक कह देना चाहिए।

जिस तरह रत्नप्रभा का कहा उसी तरह १८ दण्डक में (१३ दण्डक देवता के, ३ दण्डक तीन विकलेन्द्रिय के, तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य, ये १८ दण्डक में) कह देना चाहिए।

---

* जो जीव यहां से मर कर जाते हैं वे वहां जाकर आहार करते हैं यावत् शरीर बांधते हैं।

† जो जीव मारणान्तिक समुद्घात करके बिना मरे ही यानी उस जीव के कितनेक आत्मप्रदेश रत्नप्रभा नरक में जाते हैं वहां जाकर आहार लिये बिना ही अपने पहले के शरीर में वापिस आते हैं फिर दूसरी बार मारणान्तिक समुद्घात करके मर कर वापिस रत्नप्रभा नरक में उत्पन्न होकर आहार लेते हैं, परिणमाते हैं यावत् शरीर बांधते हैं।

पाँच स्थावर मेरु पर्वत से छह दिशाओं में अंगुल के असंख्यातवें भाग से असंख्यात हजार योजन लोकान्त तक एक प्रदेशी श्रेणी (विदिशा) को छोड़ कर चाहे जहाँ उत्पन्न होते हैं। इनमें भी पूर्वोक्त प्रकार से दो दो अलावा (आलापक) कहना। इस तरह पाँच स्थावर के छह दिशा आसरी ६० अलावा हुए और त्रस के १९ दण्डकों के ३८ अलावा हुए। ये सब मिलकर ९८ अलावा हुए ठिकाणा (स्थान) आसरी तो अनेक अलावा होते हैं। ठिकाणा आसरी अनेक अलावों में पहला अलावा देश थकी समुद्घात इलिकागति का है और दूसरा अलावा सर्व थकी समुद्घात डेडका (मेढक) गति का है।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ५४)

श्री भगवतीजी सूत्र के छठे शतक के सातवें उद्देशे में 'काल विशेषण' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१ अहो भगवान् ! कोठा में खाई आदि में बन्द किये हुए छांदण दिये हुए धान की योनि (अंकुर उत्पन्न करने की शक्ति) कितने काल तक रहती है ? हे गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त सचित्त रहती है, पीछे अचित्त अबीज हो जाती है, उत्कृष्ट शालि (कलमी आदि अनेक जाति के चावल), व्रीहि (सामान्य जाति

※ जघन्य सब धान की योनि अन्तर्मुहूर्त तक सचित्त रहती है।

के चावल), गेहूँ, जव, जवार की योनि ३ वर्ष तक सचित्त रहती है

कलाय (मटर), मसूर, तिल, मूंग, उड़द, चवला, कुलथ, (चोला के आकार वाला चपटा धान—कलथी) तूर, चना आदि की योनि (उत्कृष्ट) ५ वर्ष तक सचित्त रहती है। अलसी, कुसुम्भ, कोद्रव, कांगणी, वरटी, राल, सण, सरसों आदि की योनि (उत्कृष्ट) ७ वर्ष तक सचित्त रहती है, पीछे अचित्त हो जाती है।

२—अहो भगवान् ! एक मुहूर्त के कितने श्वासोच्छ्वास होते हैं ? हे गौतम ! एक मुहूर्त में ३७७३ श्वासोच्छ्वास होते हैं। एक समय से लेकर शीर्षप्रहेलिका तक गणित है। इसके बाद पल्योपम, सागरोपम यावत् कालचक्र तक उपमा काल हैं।

३—अहो भगवान् ! अवसर्पिणी काल के सुषमासुषम आरा में इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में कैसा भाव था ? हे गौतम ! भूमि—भाग बहुत सम रमणीय था यावत् देवकुरु उत्तरकुरु क्षेत्र के जुगलियों की तरह यहाँ ६ प्रकार के उत्कृष्ट सुख वाले मनुष्य बसते थे—१ पद्म समान गन्ध वाले, २ कस्तूरी समान गन्ध वाले, ३ ममत्व रहित, ४ तेजस्वी, रूपवन्त, ५ सहनशील, ६ उतावल रहित गम्भीर गति से चलने वाले मनुष्य बसते थे।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ५५)

श्री भगवतीजी सूत्र के छठे शतक के आठवें उद्देशे में 'पृथ्वी', आदि का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं–

तमुकाए कप्पपणए अगणी पुढवी य अगणिपुढवीसु ।
आऊ तेऊ वणस्सइ, कप्पुवरिम कण्हराईसु ॥

१—अहो भगवान्! पृथ्वियाँ कितनी हैं? हे गौतम! पृथ्वियाँ ८ हैं (७ नरक, १ ईषत्–प्राग्भारा– सिद्धशिला)।

२—अहो भगवान्! क्या ७ नरक, १२ देवलोक, नव ग्रैवेयक, पांच अनुत्तर विमान, १ सिद्धशिला इन २२ ठिकानों के नीचे घर, हाट, ग्रामादि हैं? हे गौतम! नहीं हैं।

३—अहो भगवान्! नारकी और देवलोकों के नीचे गाज, बीज, मेघ, बादल, वृष्टि कौन करते हैं? हे गौतम! पहली दूसरी नारकी के नीचे गाज, बीज, मेघ, बादल, वृष्टि देव, असुर कुमार और नागकुमार ये ३ करते हैं। तीसरी नरक, पहला दूसरा देवलोक के नीचे देव और असुरकुमार ये दो करते हैं। शेष ४ नरक, और तीसरे देवलोक से बारहवें देवलोक तक, इन १४ के नीचे देव (वैमानिक देव) करते हैं (असुरकुमार, नागकुमार नहीं)। नव ग्रैवेयक, पांच अनुत्तर विमान और सिद्धशिला के नीचे कोई नहीं करता। सात नरकों के नीचे बादर अग्निकाय नहीं है परन्तु विग्रह गति वाले जीव पाये जाते हैं। देव-

लोकों से लेकर सिद्धशिला तक १५ ठिकानों के नीचे बादर पृथ्वीकाय, बादर अग्निकाय नहीं है परन्तु विग्रह गति वाले जीव पाये जाते हैं। नवमे देवलोक से लेकर सिद्धशिला तक इन नौ ठिकानों के नीचे बादर अप्काय भी नहीं है परन्तु विग्रह गति वाले जीव पाये जाते हैं। २२ ही ठिकानों के नीचे चन्द्र सूर्य आदि नहीं है, चन्द्र सूर्य आदि की प्रभा भी नहीं है।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ५६)

श्री भगवतीजी सूत्र के छठे शतक के आठवें उद्देशे में 'आयुष्य बन्ध' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं।

१—अहो भगवान् ! आयुष्य बन्ध कितने प्रकार का कहा गया है ? हे गौतम ! आयुष्य बन्ध छह प्रकार का कहा गया है—१ जातिनाम-निधत्तायु, २ गति नाम निधत्तायु, ३ स्थिति नाम निधत्तायु, ४ अवगाहना नाम निधत्तायु, ५ प्रदेश नाम निधत्तायु, ६ अनुभाग नाम निधत्तायु। ये ६ निधत्त (ढीला) बन्ध आसरी हैं और ६ निकाचित (गाढ़ा-मजबूत) बन्ध आसरी हैं। ये १२ एक जीव आसरी और १२ बहुत (घणा) जीव आसरी, ये २४ अलावा हुए। २४ समुच्चय के और २४ नीच गोत्र के साथ बंधने वाले तथा २४ उच्च गोत्र के साथ बंधने वाले, ये ७२ अलावा हुए। इनको समुच्चय जीव और २४ दण्डक, इन २५ से गुणा करने से १८०० अलावा होते हैं।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ५७)

श्री भगवती जी सूत्र के छठे शतक के दसवें उद्देशे में जीव के 'सुख दुःखादि' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

जीवाण य सुहं दुक्खं, जीवे जीवति तहेव भविया य ।
एगंतदुक्खं वेयण, अत्तमायाय केवली ॥

१—अहो भगवान् ! अन्यतीर्थी इस प्रकार कहते हैं कि राजगृह नगर में जितने जीव हैं उन जीवों के सुख दुःख बाहर निकाल कर हाथ में लेकर बोर की गुठली प्रमाण यावत् जूं लीख प्रमाण भी दिखाने में कोई समर्थ नहीं है । अहो भगवान् ! क्या यह ठीक है ? हे गौतम ! अन्यतीर्थियों का यह कहना मिथ्या है । मैं इस तरह से कहता हूँ कि सम्पूर्ण लोक के जीवों के सुख दुःख को बाहर निकाल कर हाथ में लेकर दिखाने में कोई समर्थ नहीं है । अहो भगवान् ? किस कारण से दिखाने में समर्थ नहीं है ? हे गौतम ! जिस तरह तीन चुटकी बजावे उतने में इस जम्बूद्वीप की २१ परिक्रमा करे ऐसी शीघ्रगति वाला कोई देव सम्पूर्ण जम्बूद्वीप में व्याप्त होवे ऐसा गन्ध का डिब्बा खोल कर जम्बूद्वीप की २१ परिक्रमा करे उतने में गन्ध उड़ कर जीवों के नाक में प्रवेश करे उस गन्ध को अलग निकाल कर बताने में कोई समर्थ नहीं है, इसी तरह जीवों के सुख दुःख को बाहर निकाल कर बताने में कोई समर्थ नहीं

२—अहो भगवान् ! क्या जीव है सो चैतन्य है या चैतन्य है सो जीव है ? हे गौतम ! जीव है सो चैतन्य है और चैतन्य है सो जीव है, जीव और चैतन्य एक ही है । नारकी का नेरीया व नियमा जीव है, और जीव है सो नेरीया अनेरीया दोनों ही है । इसी तरह २४ ही दण्डक कह देना चाहिए ।

३—अहो भगवान् ! जीव है सो प्राण धारण करता है या प्राण धारण करता है सो जीव है ? हे गौतम ! जो प्राण धारण करता है सो नियमा जीव है परन्तु जीव प्राण धारण करता भी है और नहीं भी करता है, जैसे सिद्ध भगवान्, द्रव्यप्राण धारण नहीं करते हैं । नारकी का नेरीया नियमा प्राणधारी है और प्राणधारी है सो नेरीया अनेरीया दोनों ही है । इसी तरह २४ ही दण्डक कह देना चाहिए ।

४—अहो भगवान् ! भवसिद्धिक (भवी) नेरीया होता है या नेरीया भवसिद्धिक होता है ? हे गौतम ! भवसिद्धिक नेरीया अनेरीया दोनों ही होता है । इसी तरह नेरीया भी भवसिद्धिक और अभवसिद्धिक दोनों होता है । इस तरह २४ ही दण्डक कह देना चाहिए ।

५—अहो भगवान् ! अन्यतीर्थी कहते हैं कि सब प्राणी भूत जीव सत्त्व एकान्त दुःखरूप वेदना वेदते हैं । क्या यह ठीक है ? हे गौतम ! अन्यतीर्थियों का यह कहना मिथ्या है । मैं इस ..० से कहता हूँ—नारकी का नेरीया एकान्त दुःखरूप वेदना वेदता है, कदाचित् सुखरूप वेदना भी वेदता है । चारों ही

जाति के देवता एकान्त सुखरूप वेदना वेदते हैं, कदाचित् दुःख रूप वेदना भी वेदते हैं। औदारिक के १० दण्डक विविध प्रकार की (वेमाया) वेदना वेदते हैं अर्थात् कदाचित् सुख और कदाचित् दुःख वेदते हैं।

६–अहो भगवान्! क्या नारकी का नेरीया आत्मशरीर क्षेत्रावगाढ़ (स्व शरीर क्षेत्र ओघाया) पुद्गलों को ग्रहण कर आहार करता है या अनन्तर क्षेत्रावगाढ़ (अपने शरीर क्षेत्र ओघाया की अपेक्षा दूसरा क्षेत्र) पुद्गलों को ग्रहण कर आहार करता है या परंपरक्षेत्रावगाढ (आत्म क्षेत्र से अनन्तर क्षेत्र उससे पर क्षेत्र वह परंपर क्षेत्र) पुद्गलों को ग्रहण कर आहार करता है? हे गौतम! आत्मशरीर क्षेत्रावगाढ पुद्गलों को आत्मा द्वारा ग्रहण कर आहार करता है। अनन्तर क्षेत्रावगाढ और परंपरक्षेत्रावगाढ पुद्गलों को आत्मा द्वारा ग्रहण कर आहार नहीं करता है। इसी तरह २४ ही दण्डक कह देना चाहिए।

७–अहो भगवान्! क्या केवली महाराज इन्द्रियों से जानते और देखते हैं? हे गौतम! केवली महाराज इन्द्रियों से नहीं जानते और नहीं देखते हैं। छहो दिशाओं में द्रव्य क्षेत्र काल भाव मित (मर्यादा सहित) भी जानते देखते हैं और अमित (मर्यादा रहित) भी जानते देखते हैं यावत् केवली का दर्शन निरावरण (आवरण रहित) है।

सेवं भंते! सेवं भंते!!

(थोकड़ा नं० ५८)

श्री भगवतीजी सूत्र के सातवें शतक के पहले उद्देशे में 'आहार' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! जीव मर कर परभव में जाता हुआ कितने समय तक अनाहारक रहता है ? हे गौतम ! परभव में जाता हुआ जीव पहले, दूसरे, तीसरे समय में सिय (कदाचित्) आहारक, सिय अनाहारक होता है। चौथे समय में नियमा (अवश्य) आहारक होता है। समुच्चय जीव और एकेन्द्रिय में पहले, दूसरे तीसरे समय तक आहार की भजना है, चौथे समय में आहार की नियमा है। त्रस के १९ दण्डक के जीवों में पहले दूसरे समय आहार की भजना है तीसरे समय आहार की नियमा है।

२—अहो भगवान् ! जीव किस समय अल्प आहारी होता है ? हे गौतम ! उत्पन्न होते वक्त प्रथम समय में और मरते वक्त चरम (अन्तिम) समय में जीव अल्प-आहारी होता है।

३—अहो भगवान् ! लोक का कैसा संठाण (संस्थान) है ? हे गौतम ! लोक का संठाण सुप्रतिष्ठ (सरावला) के आकार है। नीचे चौड़ा, बीच में संकड़ा और ऊपर पतला है। ऐसे शाश्वत लोक में केवलज्ञान केवल दर्शन के धारक अरिहन्त जिन केवली जीवों को अजीवों को सब को जानते देखते हैं। वे सिद्ध होते हैं यावत् सब दुःखों का अन्त करते हैं।

४—अहो भगवान् ! उपाश्रय में रह कर सामायिक करने वाले श्रावक को ईर्यापथिकी क्रिया लगती है या सांपरायिकी ? हे गौतम ! सकषायी होने से उसको सांपरायिकी क्रिया लगती है।

५—अहो भगवान् ! किसी श्रावक के त्रसजीवों को मारने का त्याग किया हुवा है लेकिन पृथ्वीकाय के वध का त्याग नहीं है वह पृथ्वी खोदे उस वक्त कोई त्रस जीव मर जाय तो क्या उसके व्रत में अतिचार लगता है ? हे गौतम ! णो इणट्ठे समट्ठे। वह श्रावक त्रस जीवों को *मारने की प्रवृत्ति नहीं करता है, इसलिए ग्रहण किए हुए उसके व्रत में अतिचार नहीं लगता है, व्रत भंग नहीं होता है। इसी तरह जिस श्रावक ने वनस्पति छेदने का त्याग किया है, पीछे पृथ्वी खोदते हुए जड़ मूल आदि छेदन हो जाय तो उसके ग्रहण किये हुए व्रत में अतिचार (दोष) नहीं लगता है, व्रत भंग नहीं होता है।

६—अहो भगवान् ! तथारूप के (उत्तम) श्रमण माहण को प्रासुक एषणीय आहार पानी बहरावे (देवे) तो क्या लाभ होता है ? हे गौतम ! वह जीव समाधि प्राप्त करता है, बोध-

---

* सामान्य रीति से देशविरति श्रावक को संकल्प पूर्वक त्रस जीव की हिंसा का त्याग होता है, इसलिए जब तक जिसकी हिंसा का त्याग किया हो, उसकी संकल्प पूर्वक हिंसा करने की प्रवृत्ति न करे तब तक उसके ग्रहण किये हुए व्रत में दोष नहीं लगता है।

बीज समकित को प्राप्त करता है और अनुक्रम से मोक्ष में जाता है।

७—अहो भगवान् ! क्या कर्मरहित जीव की गति (गमन) होती है ? हाँ, गौतम ! होती है। अहो भगवान् ! कर्मरहित जीव की कैसी गति होती है ? हे गौतम ! *तुम्बी, फली, धूम, (धूंआ), वाण के दृष्टान्त से कर्म रहित जीव की गति ऊर्ध्व (ऊंची) होती है।

८—अहो भगवान् ! दुखी जीव दुःख से व्याप्त होता है अथवा अदुखी (दुःख रहित) जीव दुःख से व्याप्त होता है ? हे गौतम ! दुखी जीव दुःख से व्याप्त होता है परंतु अदुखी जीव दुःख से व्याप्त नहीं होता है। १ दुखी जीव दुःख से व्याप्त होता है, २ दुःख को ग्रहण करता है, ३ दुःख की उदीरणा करता है, ४ दुःख को वेदता है, ५ दुःख की निर्जरा करता है, ये पांच बोल समुच्चय जीव और २४ दण्डक के साथ कहने से १२५ अलावा हुए।

९—अहो भगवान् ! बिना उपयोग गमन करते, खड़े रहते, बैठते, सोते, वस्त्र पात्रादि लेते रखते हुए साधु को ईर्यापथिकी

---

* जैसे कोई पुरुष तुम्बी पर मिट्टी के आठ लेप करके पानी में डाले तो भारी होने से वह तुम्बी नीचे चली जाय परन्तु वे मिट्टी के सब लेप गल कर उतर जाने से तुम्बी पानी के ऊपर आ जाती है। इसी प्रकार आठ कर्म रहित जीव की भी ऊर्ध्वगति (ऊंची गति) होती है।

जैसे एरण्ड का फल सूखने पर उसका बीज उछल कर बाहर पड़ता है। धूम (धूंआ) स्वाभाविक ही ऊपर जाता है। धनुष से छूटा हुआ बाण एक दम सीधा जाता है। इसी तरह आठ कर्मों से छूटे हुए (रहित) जीव की गति ऊर्ध्व (ऊंची) होती है, इसलिए वह मोक्ष में ... है।

क्रिया लगती है या सांपरायिकी क्रिया लगती है ? हे गौतम ! उसे ईर्यापथिकी क्रिया नहीं लगती है किन्तु सकषायी होने से उसको सांपरायिकी क्रिया लगती है।

१०—अहो भगवान् ! इंगाल दोष, धूम दोष और संयोजना दोष किसको कहते हैं ! हे गौतम ! प्रासुक एषणीय आहार पानी लाकर उसमें मूर्च्छित, गृद्ध, आसक्त होकर आहार करे तो इंगाल (अंगार) दोष लगता है। उसी आहार को क्रोध से खिन्न होकर माथा धुनता धुनता आहार करता है, (खाता है) तो धूम दोष लगता है। प्रासुक एषणीय निर्दोष आहार पानी लाकर उसमें स्वाद उत्पन्न करने के लिये एक दूसरे के साथ संयोग मिला कर आहार करे तो संयोजना दोष लगता है।

११—अहो भगवान् ! खेत्ताइक्कंते (क्षेत्रातिक्रान्त), कालाइक्कंते, (कालातिक्रान्त), मग्गाइक्कंते (मार्गातिक्रान्त), पमाणाइक्कंते (प्रमाणातिक्रान्त) दोष किसे कहते हैं ? हे गौतम ! कोई साधु साध्वी सूर्य उदय से पहले आहार पानी लाकर सूर्य उदय से पीछे भोगता है तो उसे खेत्ताइक्कंते दोष लगता है। प्रथम पहर में लाये हुए आहार पानी को अन्तिम पहर में भोगता है तो कालाइक्कंते दोष लगता है। दो कोष (गाऊ) उपरान्त ले जाकर आहार पानी भोगता है तो मग्गाइक्कंते दोष लगता है। प्रमाण से अधिक आहार करता है तो पमाणाइक्कंते दोष लगता है।

१२—अहो भगवान् ! शस्त्रातीत शस्त्रपरिणत आहार पानी किसे कहते हैं ? हे गौतम ! जो अग्नि वगैरह शस्त्र से अच्छी तरह परिणत होकर अचित्त (जीव रहित) हो गया हो उस आहार पानी को शस्त्रातीत शस्त्रपरिणत कहते हैं ।

साधु को चाहिए कि आहार पानी के सब दोष टाल कर संयम निर्वाह के लिए शुद्ध आहार पानी भोगवे ।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ५६)

श्री भगवतीजी सूत्र के सातवें शतक के दूसरे उद्देशे में 'सुपच्चक्खाण दुपच्चक्खाण (पच्चक्खाणापच्चक्खाणी) का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! कोई कहता है कि मुझे सर्व प्राण सर्व भूत सर्व जीव सर्व सत्त्व को हनने का (मारने का) पच्चक्खाण है तो उसके पच्चक्खाण को सुपच्चक्खाण कहना चाहिए या दुपच्चक्खाण कहना चाहिए ? हे गौतम !* उसके पच्चक्खाण को सिय (कदाचित्) सुपच्चक्खाण कहना चाहिए और सिय दुपच्चक्खाण कहना चाहिए। अहो भगवान् ! इसका क्या कारण है ? हे गौतम ! जिसको ऐसा जाणपणा नहीं है कि ये जीव हैं, ये अजीव हैं, ये त्रस हैं, ये स्थावर हैं, यदि वह कहता है कि मुझे सर्व प्राण सर्व भूत सर्व जीव सर्व सत्त्व को हनने का त्याग है तो (१) वह मृषावादी है, सत्यवादी नहीं, २ तीन करण तीन

---

* ये दोनों तरह के पचक्खाण साधु आसरी (साधुके लिए) कहे हैं।

जोग से असंजति है, ३ अविरति है, ४ पाप कर्म नहीं पच्चक्खे हैं, ५ वह सक्रिय (आश्रव सहित) है, ६ असंवुडा (संवर-रहित) है,७ छह काया का दण्डी (दण्ड देने वाला–हिंसा-करने वाला) है, ८ एकान्त बाल-अज्ञानी है, उसके पच्चक्खाण दुपच्चक्खाण है, सुपच्चक्खाण नहीं* ।

जिसको ऐसा जाणपणा (ज्ञान) है कि 'ये जीव हैं, ये अजीव हैं, ये त्रस हैं, ये स्थावर हैं, यदि वह कहता है कि मुझे सर्व प्राण सर्व भूत सर्व जीव सर्व सत्त्व को हनने (मारने) का त्याग है तो १ वह सत्यवादी है, मृषावादी नहीं, २ तीन करण तीन जोग से संजति है, ३ विरति है, ४ पाप कर्म का पच्चक्खाण किया है, ५ अक्रिय (आश्रव रहित) है, ६ संवुडा (संवर सहित) है, ७ छह काया का रक्षक है, ८ एकान्त पण्डित ज्ञानी है। उसके पच्चक्खाण सुपच्चक्खाण है, दुपच्चक्खाण नहीं* ।

२ अहो भगवान् ! पच्चक्खाण कितने प्रकार के हैं ? हे गौतम ! पच्चक्खाण दो प्रकार के हैं–मूलगुण पच्चक्खाण और उत्तर गुण पच्चक्खाण। मूलगुण पच्चक्खाण के दो भेद–सर्व मूल गुण पच्चक्खाण और देश मूल गुण पच्चक्खाण। सर्व मूल गुण पच्चक्खाण के ५ भेद–सर्वथा प्रकार से हिंसा, झूठ, चोरी, मैथुन, परिग्रह का त्याग करना अर्थात् पाँच महाव्रतों का पालन करना। देश मूल गुण पच्चक्खाण के ५ भेद–स्थूल प्राणाति-

---

* ये पच्चक्खाण साधु के लिए हैं।

पात यावत् स्थूल परिग्रह का त्याग करना अर्थात् पांच अणुव्रतों का पालन करना। उत्तर गुण पच्चक्खाण के दो भेद–सर्व उत्तरगुण पच्चक्खाण, देश उत्तरगुण पच्चक्खाण। सर्व उत्तरगुण पच्चक्खाण के÷ १० भेद–१ अणागयं–(जो तप आगामी काल में करना है वह पहले कर लेवे), २ अइक्कंतं–(जो तप पहले करना था वह किसी कारण से नहीं हो सका तो पीछे करे) ३ कोडी सहियं–(जैसा तप पहले दिन–आदि में करे वैसा पिछले दिन (अंतमें) भी करे, बीच में नाना प्रकार का तप करे), ४ नियंटियं (नियमित दिन में विघ्न आने पर भी धारा हुआ–विचारा हुआ तप अवश्य करे), ५ सागारं (आगार सहित तप करे), ६ अणागारं (आगार रहित तप करे), ७ परिमाणकडं (×दत्ति-दात कवल–(ग्रास), घर, चीज आदि का परिमाण करे), ८ निरवसेसं (चारों प्रकार के आहार का त्याग करे, संथारा करे), ९ संकेयं–(मुष्टि आदि संकेत पूर्वक तप करे), १० अद्धा÷ (काल का परिमाण कर तप करे)। देश उत्तरगुण पच्च-

---

÷ गाथा—अणागय मइक्कंतं, कोडीसहियं नियंटियं चेव।
सागारमणागारं, परिमाण कडं निरवसेसं॥
संकेयं चेव अद्धाए, पच्चक्खाणं भवे दसहा॥

×एक साथ एकबार पात्र में पड़ा हुवा अन्नादि को १ दात कहते हैं

÷अद्धा तप के १० भेद हैं–१ नवकारसी, २ पोरिसी, ३ दो पोरिसी, ४ एकासन, ५ एकलठाण, ६ आयम्बल, ७ नीवि, ८ उपवास, ९ अभिग्रह १० दिवस चरिम।

क्खाण के ७ भेद-तीन गुणव्रत (दिशाव्रत, उपभोगपरिभोग परिमाण व्रत, अनर्थदण्डविरमण व्रत)। चार शिक्षाव्रत- (सामायिक, देशावकाशिक, पौषधोपवास, अतिथि संविभाग व्रत और * संलेखना)।

३—अहो भगवान् ! क्या जीव मूलगुण पच्चक्खाणी है या उत्तरगुण पच्चक्खाणी है या अपच्चक्खाणी है ? हे गौतम ! समुच्चय जीव में भांगा पावे तीन। मनुष्य और तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय में भांगा पावे ३-३, बाकी २२ दण्डक अपच्चक्खाणी है।

अल्पबहुत्व-समुच्चय जीव में सब से थोड़े मूलगुण पच्चक्खाणी, उससे उत्तरगुण पच्चक्खाणी असंख्यातगुणा, उससे अपच्चक्खाणी अनन्तगुणा। तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय में सबसे थोड़े मूल

---

* संलेखना का पूरा नाम है-अपश्चिम मारणान्तिक संलेखना जोषणा आराधना-सब से पीछे मरण के समय में शरीर और कषायों को कृश करने के लिये जो तप विशेष स्वीकार कर आराधन किया जाय, उसे अपश्चिम मारणान्तिक संलेखना जोषणा आराधना कहते हैं।

देशउत्तरगुणपच्चक्खाण में दिशाव्रत आदि ३ गुणव्रत ४ शिक्षाव्रत ये सात गुणों की गिनती की गई है किन्तु संलेखना की गिनती नहीं की गई इसका कारण यह है कि दिशाव्रत आदि सात गुण अवश्य देशोत्तर गुण रूप हैं परन्तु इस संलेखना का नियम नहीं है क्योंकि देशोत्तर गुण वाले को यह देशोत्तर गुण रूप है और सर्वोत्तर गुण वाले के लिए यह सर्वोत्तर गुण रूप है। देशोत्तर गुण वाले को भी अन्त में यह संलेखना करने योग्य है। यह बात बतलाने के लिए यहां पर आठवीं संलेखना कही गई है।

गुण पच्चक्खाणी, उससे उत्तरगुण पच्चक्खाणी असंख्यात गुणा, उससे अपच्चक्खाणी असंख्यात गुणा। मनुष्य में सब से थोड़े मूलगुण पच्चक्खाणी, उससे उत्तरगुण पच्चक्खाणी संख्यात गुणा, उससे अपच्चक्खाणी असंख्यात गुणा।

४—अहो भगवान्! क्या जीव सर्व मूलगुण पच्चक्खाणी है या देश मूलगुण पच्चक्खाणी है या अपच्चक्खाणी है? हे गौतम! समुच्चय जीव में भांगा पावे ३। नारकी से वैमानिक तक मनुष्य और तिर्यंच पंचेन्द्रिय वर्ज कर २२ दण्डक में भांगा पावे एक–अपच्चक्खाणी। तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय में भांगा पावे २ (देशमूलगुण पच्चक्खाणी, अपच्चक्खाणी)। मनुष्य में भांगा पावे ३।

अल्पबहुत्व—समुच्चय जीव में सबसे थोड़े सर्वमूलगुण-पच्चक्खाणी, उससे देशमूलगुण पच्चक्खाणी असंख्यातगुणा, उससे अपच्चक्खाणी अनन्तगुणा। तिर्यंच पंचेन्द्रिय में सब से थोड़े देशमूलगुण पच्चक्खाणी, उससे अपच्चक्खाणी असंख्यात गुणा। मनुष्य में सबसे थोड़े सर्व मूलगुण पच्चक्खाणी, उससे देश मूलगुण पच्चक्खाणी संख्यात गुणा, उससे अपच्चक्खाणी असंख्यातगुणा।

५—अहो भगवान्! क्या जीव सर्वउत्तर गुण पच्चक्खाणी है या देशउत्तरगुणपच्चक्खाणी है या अपच्चक्खाणी है? हे गौतम! समुच्चय जीव में भांगा पावे ३। मनुष्य और तिर्यंच

पंचेन्द्रिय में भांगा पावे ३-३ । बाकी २२ दण्डक में भांगा पावे एक (अपच्चक्खाणी) ।

अल्पबहुत्व-समुच्चय जीव में सबसे थोड़े सर्व उत्तरगुण पच्चक्खाणी, उससे देशउत्तरगुण पच्चक्खाणी असंख्यातगुणा, उससे अपच्चक्खाणी अनन्तगुणा । तिर्यंच पंचेन्द्रिय में सब से थोड़े सर्व उत्तरगुणपच्चक्खाणी, उससे देशउत्तरगुणपच्चक्खाणी असंख्यातगुणा, उससे अपच्चक्खाणी असंख्यातगुणा। मनुष्य में सब से थोड़े सर्वउत्तरगुण पच्चक्खाणी, उससे देशउत्तरगुण पच्च-क्खाणी संख्यातगुणा, उससे अपच्चक्खाणी असंख्यातगुणा ।

४—अहो भगवान् ! क्या जीव संजति (संयति) है या असंजति (असंयति) है या संजतासंजति (संयतासंयति) है ? हे गौतम ! समुच्चय जीव में भांगा पावे ३ । मनुष्य में भांगा पावे ३ । तिर्यंच पंचेन्द्रिय में भांगा पावे २ (असंजति और संजतासंजति) । बाकी २२ दंडक में भांगा पावे एक-असंजति ।

अल्पबहुत्व—समुच्चय जीव में सब से थोड़े संजति, उससे संजतासंजति असंख्यातगुणा, उससे असंजति अनन्तगुणा । तिर्यंच पंचेन्द्रिय में सब से थोड़े संजतासंजति, उससे असंजति असंख्यातगुणा । मनुष्य में सबसे थोड़े संजति, उससे संजता-संजति संख्यातगुणा, उससे असंजति असंख्यातगुणा ।

७—अहो भगवान् ! क्या जीव पच्चक्खाणी है या पच्च-क्खाणापच्चक्खाणी है या अपच्चक्खाणी है ? हे गौतम ! समु-

च्चय जीव में भांगा पावे ३। मनुष्य में भांगा पावे ३। तिर्यंच पंचेन्द्रिय में भांगा पावे २। बाकी २२ दण्डक में भांगा पावे एक—अपच्चक्खाणी।

अल्पबहुत्व—समुच्चय जीव में सब से थोड़े पच्चक्खाणी, उससे पच्चक्खाणापच्चक्खाणी असंख्यातगुणा, उससे अपच्चक्खाणी अनन्तगुणा। तिर्यंच पंचेन्द्रिय में सबसे थोड़े पच्चक्खाणापच्चक्खाणी, उससे अपच्चक्खाणी असंख्यातगुणा। मनुष्य में सबसे थोड़े पच्चक्खाणी, उससे पच्चक्खाणापच्चक्खाणी संख्यातगुणा, उससे अपच्चक्खाणी असंख्यातगुणा।

८ अहो भगवान्! क्या जीव शाश्वत है या अशाश्वत है? हे गौतम! जीव द्रव्य की अपेक्षा शाश्वत है और पर्याय की अपेक्षा अशाश्वत है। इसी तरह २४ ही दण्डक कह देना चाहिये।

सेवं भंते! सेवं भंते!!

(थोकड़ा नं० ६०)

श्री भगवतीजी सूत्र के सातवें शतक के तीसरे उद्देशे में 'वनस्पति के आहार आदि' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान्! वनस्पति किस काल में अल्पाहारी होती है और किस काल में महाआहारी होती है? हे गौतम! पावस ऋतु (श्रावण भादवा) और वर्षा ऋतु (आसोज, कार्तिक) में सब से अधिक महा आहारी होती है। उसके बाद ऋतु (मिगसर, पौष), हेमन्त ऋतु (माघ, फाल्गुन,)

वसन्त ऋतु (चैत्र, वैशाख) में अनुक्रम से अल्पाहारी होती है यावत् ग्रीष्म ऋतु (जेठ, आषाढ़) में सबसे अल्पाहारी होती है।

२–अहो भगवान् ! ग्रीष्म ऋतु में वनस्पति सबसे अल्पाहारी होती है सो बहुत सी वनस्पति में खूब पान फूल फल होते हैं सो किस तरह से ? हे गौतम ! ग्रीष्म ऋतु में वनस्पति में उष्ण-योनिया जीव बहुत उत्पन्न होते हैं यावत् वृद्धि पाते हैं, इस कारण से वनस्पति में पान फूल, फल बहुत होते हैं।

३–अहो भगवान् ! वनस्पति का मूल, कन्द यावत् बीज किस जीव से व्याप्त है ? हे गौतम ! वनस्पति का मूल, मूल के जीव से व्याप्त है यावत् बीज, बीज के जीव से व्याप्त है।

४–अहो भगवान् ! वनस्पति के जीव किस तरह आहार लेते हैं और किस तरह परिणमाते हैं ? हे गौतम ! वनस्पति का मूल पृथ्वी से संबद्ध (जुड़ा हुआ) है जिससे वनस्पति आहार लेती है और परिणमाती है। इस तरह, बीज तक १० अलावा कह देना चाहिए।

५–अहो भगवान् ! आलू, मूला आदि अनेक वनस्पतियाँ क्या अनन्त जीव वाली और भिन्न भिन्न जीव वाली हैं ? हाँ, गौतम ! आलू, मूला आदि अनेक वनस्पतियाँ अनन्त जीव वाली और भिन्न भिन्न जीव वाली हैं।

६–अहो भगवान् ! क्या कृष्णलेशी नैरयिक अल्पकर्मी और नीललेशी नैरयिक महाकर्मी हो सकता है ? हाँ, गौतम !

स्थिति*आसरी कृष्ण लेशी नैरयिक अल्पकर्मी और नीललेशी नैरयिक महाकर्मी हो सकता है। इस तरह ज्योतिषी+देव को वर्ज कर २३ दण्डक में जिस में जितनी लेश्या पावे उसमें उतनी लेश्या से अल्पकर्मी और महाकर्मी कह देना चाहिए।

७—अहो भगवान्! क्या वेदना और निर्जरा एक कही जा सकती है? हे गौतम! वेदना और निर्जरा एक नहीं कही जा सकती है। वेदना कर्म है और निर्जरा नोकर्म× है। इस तरह

---

* कृष्ण लेश्या अत्यन्त अशुभ परिणाम रूप है उसकी अपेक्षा नील लेश्या कुछ शुभ परिणाम रूप है। इसलिये सामान्यतः कृष्णलेश्या वाला महाकर्मी और नीललेश्या वाला अल्पकर्मी होता है। परन्तु कदाचित् आयुष्य की स्थिति की अपेक्षा कृष्ण लेश्या वाला अल्पकर्मी और नील लेश्या वाला महाकर्मी भी हो सकता है। जैसे कि—कृष्ण लेश्या वाला नैरयिक जिसने अपनी आयुष्य की बहुत स्थिति क्षय कर दी है उसने बहुत कर्म भी क्षय कर दिये हैं, उसकी अपेक्षा कोई नील लेश्या वाला नैरयिक १० सारोपगम की स्थिति से पांचवीं नरक में अभी तत्काल उत्पन्न हुआ ही है उसने आयुष्य की स्थिति अधिक क्षय नहीं की है, इसलिये अभी उसके बहुत कर्म बाकी हैं। इस कारण वह उस कृष्ण लेशी नैरयिक की अपेक्षा महाकर्मी है।

+ ज्योतिषी देवों में सिर्फ एक तेजोलेश्या पाई जाती है, दूसरी लेश्या नहीं पाई जाती। इस कारण से दूसरी लेश्या की अपेक्षा अल्पकर्मी और महाकर्मी नहीं कहा जा सकता।

× उदय में आये हुये कर्म को भोगना वेदना कहलाती है और कर्म भोग कर क्षय कर दिया गया है वह निर्जरा कहलाती है। य वेदना को कर्म कहा गया है और निर्जरा को नोकर्म कहा गया है।

वेदना और निर्जरा में तीन काल आसरी कह देना । वेदना और निर्जरा का समय एक नहीं है । जिस समय वेदता है, उस समय निर्जरता नहीं है । जिस समय निर्जरता है, उस समय वेदता नहीं । वेदना और निर्जरा का समय अलग अलग है । इस तरह २४ ही दण्डक पर १२० अलावा कह देना ।

८—अहो भगवान् ! क्या समुच्चय जीव शाश्वत हैं या अशाश्वत हैं ? हे गौतम ! द्रव्य की अपेक्षा (द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा) जीव शाश्वत हैं और पर्याय की अपेक्षा (पर्यायार्थिक नय की अपेक्षा) जीव अशाश्वत हैं । इस तरह २४ ही दण्डक कह देना ।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ६१)

श्री भगवतीजी सूत्र के सातवें शतक के चौथे उद्देशे में 'जीव' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

जीवा १, छव्विह पुढवी२, जीवाण ३, ठिई भवट्ठिई ४, काये५, ।
णिल्लेवण ६, अणगारे ७, किरियासम्मत्त मिच्छत्तं ८ ॥

१—अहो भगवान् ! संसारी जीव के कितने भेद हैं ? हे गौतम ! ६ भेद हैं—पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, त्रसकाय* ।

---

* छहकाय जीवों के भेदानुभेद श्री पन्नवणा सूत्र पद पहले के अनुसार जान लेना चाहिये ।

२—अहो भगवान् ! पृथ्वीकाय के कितने भेद हैं ? हे गौतम ! ६ भेद हैं—१सण्हा* पृथ्वी, २ शुद्ध पृथ्वी, ३ बालुका पृथ्वी, ४ मणोसिला (मनः शिला) पृथ्वी, ५ शर्करा पृथ्वी, ६ खर पृथ्वी ।

३—अहो भगवान् ! इन छहों पृथ्वी की कितनी स्थिति है ? हे गौतम ! इन छहों पृथ्वी की जघन्य स्थिति अन्तमुहूर्त की है, उत्कृष्ट स्थिति सण्हा पृथ्वी की १००० एक हजार वर्ष, शुद्ध पृथ्वी की १२००० बारह हजार वर्ष, बालुका पृथ्वी की १४००० चौदह हजार वर्ष, मणोसिला (मनः शिला—मेनसिल) पृथ्वी की १६००० सोलह हजार वर्ष, शर्करा पृथ्वी की १८००० अठारह हजार वर्ष, खर पृथ्वी की २२००० बाईस हजार वर्ष की है ।

४—अहो भगवान् ! नारकी, देवता, तिर्यञ्च मनुष्य की कितनी स्थिति है ? हे गौतम ! नारकी देवता की जघन्य स्थिति दस हजार वर्ष की, उत्कृष्ट ३३ सागर की, तिर्यञ्च और मनुष्य की जघन्य अन्तमुहूर्त की, उत्कृष्ट तीन पल्योपम की है। इस तरह सब जीवों की भवस्थिति÷ स्थिति पद के अनुसार कह देनी चाहिये ।

---

* सण्हा य सुद्धबालू य, मणोसिला सक्करा य खरपुढवी ।
इग बार चोद्दस सोलढार बावीससयसहस्सा ॥
इस गाथा में पृथ्वीकाय के छह भेद और उनकी स्थिति बताई गई है ।

÷श्री पन्नवणा सूत्र के थोकड़ों का प्रथम भाग पत्र ५५ से ६२ इसी संस्था द्वारा छपा हुवा माफक कह देना चाहिये ।

५–अहो भगवान् ! जीव जीवपने कितने काल तक रहता है ? हे गौतम ! जीव जीवपने सदैव रहता है।

६–अहो भगवान् ! वर्तमान समय में तत्काल के उत्पन्न हुए पृथ्वीकाय के जीवों को प्रति समय एक एक अपहरे तो कितने समय में निर्लेप होवे (खाली होवे) ? हे गौतम ! जघन्य पद में असंख्याता अवसर्पिणी उत्सर्पिणी काल में और उत्कृष्ट पद में भी असंख्याता अवसर्पिणी उत्सर्पिणी काल में निर्लेप होवे। जघन्य पद से उत्कृष्ट पद में असंख्यातगुणा काल ज्यादा समझना चाहिये। इसी तरह अप्काय, तेउकाय, वायुकाय का भी कह देना चाहिये। वनस्पति अनन्तानन्त होने से कभी निर्लेप नहीं होती है। त्रसकाय जघन्य प्रत्येक सौ सागर में और उत्कृष्ट प्रत्येक सौ सागर में निर्लेप होती है। जघन्य पद से उत्कृष्ट पद विसेसाहिया (विशेषाधिक) है।

७–अवधिज्ञानी अणगार के शुद्धाशुद्ध लेश्या आसरी १२ अलावा कहे जाते हैं—

१–अविशुद्धलेशी अणगार समुद्घात रहित अविशुद्धलेशी देव देवी को नहीं जानता नहीं देखता है। २–अविशुद्धलेशी अणगार समुद्घातरहित विशुद्धलेशी देव देवी को नहीं जानता, नहीं देखता है। इसीतरह समुद्घात सहित के २ अलावा कह देना। इसी तरह समुद्घात असमुद्घात के शामिल २ अलावा कह देना। अविशुद्ध लेश्या आसरी इन ६ अलावों में नहीं जानता नहीं देखता है। विशुद्ध लेश्या आसरी ६ अलावों में जानता है, देखता है। ये १२ अलावा हुए।

८—अन्यतीर्थिक की क्रिया आसरी प्रश्न चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! अन्यतीर्थिक कहते हैं कि एक जीव एक समय में सम्यक्त्व की और मिथ्यात्व की दो क्रिया करता है। क्या उनका यह कहना ठीक है ? हे गौतम ! अन्यतीर्थिकों का यह कहना मिथ्या है। एक जीव एक समय में एक ही क्रिया कर सकता है, दो क्रिया नहीं कर सकता *।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ६२)

श्री भगवतीजी सूत्र के सातवें शतक के पांचवें उद्देशे में 'खेचर तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय की योनि संग्रह' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं।

जोणी संग्गह लेस्सा, दिट्ठी णाणे य जोग उवओगे।
उववाय ठिइसमुग्घाय, चवण जाई कुल विहीओ॥

१—अहो भगवान् ! खेचर तिर्यंच पंचेन्द्रिय की कितने प्रकार की योनि है ? हे गौतम तीन प्रकार की है—+अण्डज, पोतज, सम्मू-

---

* यह सारा थोकड़ा जीवाभिगम सूत्र के तिर्यंच के दूसरे उद्देशे में है (आगमोदय समिति पृष्ठ १३८ से १४२ तक)।

+ अण्डज—अण्डे से उत्पन्न होने वाले जीव अण्डज कहलाते हैं जैसे—कबूतर, मोर आदि।

पोतज—जो जीव जन्म के समय चर्म से आवृत्त होकर कोथली से उत्पन्न होते हैं वे पोतज कहलाते हैं, जैसे—हाथी चिमगादड़ आदि।

च्छिम। अण्डज और पोतजके ३—३ भेद हैं—स्त्री, पुरुष, नपुंसक। सम्मूर्च्छिम जीव सब नपुंसक होते हैं। इनमें लेश्या पावे ६, दृष्टि पावे ३, तीन ज्ञान, तीन अज्ञान की भजना। जोग पावे ३, उपयोग पावे २ (साकारोपयोग, अनाकारोपयोग)। असंख्याता वर्ष की आयुष्य वाले युगलिया मनुष्य और तिर्यंचों को छोड़ कर शेष यावत् आठवें देवलोक तक के जीव आकर खेचर तिर्यंच पंचेन्द्रिय में उत्पन्न होते हैं। इन की स्थिति जघन्य अन्तमुहूर्त की, उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यातवें भाग की है। इनमें समुद्घात पावे ५ (पहले की)। ये समोहया असमोहया दोनों मरण से मरते हैं। पहली से तीसरी नरक तक भवनपति से लेकर आठवें देवलोक तक और मनुष्य तिर्यंच में सब ठिकाने जाकर उत्पन्न होते हैं। खेचर की १२ लाख कुल कोड़ी है।

जिस तरह खेचर का अधिकार कहा उसी तरह जलचर, स्थलचर, उरपुर और भुजपर का अधिकार भी कह देना चाहिये। नवरं (इतना विशेष) जलचर की स्थिति जघन्य अन्तमुहूर्त, उत्कृष्ट कोड पूर्व की, कुल कोड़ी १२५०००० साढे बारह लाख है। पहली से सातवीं नरक तक जाते हैं। स्थलचर में योनि पावे २ (पोतज और सम्मूर्च्छिम) स्थिति जघन्य अन्तमुहूर्त, उत्कृष्ट ३ पल्योपम की, कुलकोडी दस लाख है। चौथी नरक तक

सम्मूर्च्छिम—देव नारकी के सिवाय जो जीव माता पिता के संयोग के बिना उत्पन्न होते हैं वे सम्मूर्च्छिम कहलाते हैं, जैसे—कीड़ी, कुंथुआ, पतंगा आदि।

जाते हैं। उरपर की स्थिति, जघन्य अन्तमुहूर्त, उत्कृष्ट कोड पूर्व की, कुलकोडी दस लाख है, पांचवीं नरक तक जाते हैं। भुजपर की स्थिति जघन्य अन्तमुहूर्त, उत्कृष्ट कोड पूर्व की, कुलकोडी नव लाख है। दूसरी नरक तक जाकर उत्पन्न होते हैं।

२—अहो भगवान्! बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय की कितनी कुलकोडी है? हे गौतम! बेइन्द्रिय की कुलकोडी सात लाख है। तेइन्द्रिय की कुलकोडी आठ लाख है। चौइन्द्रिय की कुलकोडी नव लाख है।

३—अहो भगवान्! गन्ध कितने प्रकार का कहा गया है? हे गौतम! गन्ध सात प्रकार का तथा सात सौ* प्रकार का कहा गया है।

४—अहो भगवान्! पुष्प (फूल) की कितनी कुलकोडी है? हे गौतम! पुष्प की सोलह लाख कुलकोडी है। जल से

---

* सामान्य रूप से गन्ध के ७ भेद हैं—१ मूल—मोच वनस्पति आदि। २–त्वचा–वृक्ष की छाल। ३ काष्ठ– चन्दन आदि। ४ निर्यास वृक्ष का रस–कपूर आदि। ५ पत्र–जातिपत्र, तमालपत्र आदि। ६ पुष्प–फूल प्रियङ्गु–वृक्ष के फूल आदि। ७ फल—इलायची, लौंग आदि। इन सात को काला आदि पांच वर्ण से गुणा करने से ३५ भेद हो जाते हैं। ये सब सुगन्धित पदार्थ हैं। इसलिये एक 'सुगन्ध' से गुणा करने पर फिर ३५ के ३५ ही रहे। इन ३५ को पांच रस से गुणा करने पर १७५ हुए। [illegible]पि स्पर्श आठ हैं किन्तु उपरोक्त सुगन्धित पदार्थों में व्यवहारदृष्टि से [illegible]ार स्पर्श (कोमल, हल्का, ठण्डा, गर्म) ही माने गये हैं। इस[illegible]७५ को ४ से गुणा करने पर ७०० भेद होते हैं। (७×५×१×[illegible]=७००)।

उत्पन्न होने वाले स्थल से उत्पन्न होने वाले महावृक्ष के, महागुल्म के इन चार जाति के फूलों की प्रत्येक की चार चार लाख कुल कोडी है।

५—अहो भगवान्! वल्ली, लता, हरित काय के कितने भेद हैं? हे गौतम! ४ वल्ली के ४००, ८ लता के ८०० और ३ हरितकाय के ३०० भेद हैं।

६—अहो भगवान्! स्वस्तिक आदि ११ विमानों का कितना विस्तार है? हे गौतम! कोई देवता ३ आकाश आन्तरा * प्रमाण (२८३५८० $\frac{६}{६०}$ योजन) का एक पाउंडा (कदम) भरता हुआ जावे, ऐसी शीघ्रगति से एक दिन दो दिन यावत् छह मास तक जावे तो भी स्वस्तिक आदि ११ विमानों में से किसी का पार पावे और किसी का पार नहीं पावे। स्वस्तिक आदि विमानों का इतना विस्तार है।

७—अहो भगवान्! अर्चि आदि ११ विमानों का कितना विस्तार है? हे गौतम! कोई देवता ५ आकाश आन्तरा प्रमाण (४७२६३३ $\frac{१}{२}$ योजन) का एक कदम भरता जावे, ऐसी शीघ्रगति से एक दिन दो दिन यावत् छह मास तक जावे तो भी किसी विमान का पार पावे और किसी विमान का पार नहीं पावे। अर्चि आदि ११ विमानों का इतना विस्तार है।

८—अहो भगवान्! काम आदि ११ विमानों का कितना

---

*जैसे जम्बूद्वीप में सर्वोत्कृष्ट दिन में ४७२६३ $\frac{२१}{६०}$ योजन दूर से सूर्य दिखता है उसका दुगुना (९४५२६ $\frac{४२}{६०}$ योजन प्रमाण) को आकाश आन्तरा कहते हैं।

विस्तार है ? हे गौतम ! कोई देवता ७ आकाश आन्तरा प्रमाण (६६१६८६ $\frac{५४}{६०}$ योजन) का एक कदम भरता हुआ छह महीने तक चले तो भी किसी विमान का पार पावे और किसी विमान का पार नहीं पावे। काम आदि ११ विमानों का इतना विस्तार है।

९—अहो भगवान् ! विजय वैजयंत जयंत अपराजित इन चार विमानों का कितना विस्तार है ? हे गौतम ! कोई देवता ९ आकाश आन्तरा प्रमाण (८५०७४० $\frac{१९}{६०}$ योजन) का एक कदम भरता हुआ छह महीने तक चले तो किसी विमान का पार पावे और किसी विमान का पार नहीं पावे। विजय आदि चार विमानों का इतना विस्तार है।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ६२)

श्री भगवतीजी सूत्र के सातवें शतक के छठे उद्देशे में 'आयुष्य बन्ध आदि' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं *।

अहो भगवान् ! नारकी में उत्पन्न होने वाला जीव नारकी का आयुष्य क्या इस भव में बांधता है, या नरक में उत्पन्न होती वक्त बांधता है या उत्पन्न होने के बाद बांधता है ? हे गौतम ! इस भव में बांधता है, नरक में उत्पन्न होती वक्त नहीं बांधता है, उत्पन्न होने के बाद भी नहीं बांधता है। (पहले भांगे में

---

* थोकड़ा श्री जीवाभिगम सूत्र के तिर्यंच के प्रथम उद्देशे में है।

बांधता है, दूसरे तीसरे भांगे में नहीं)। इसी तरह २४ दण्डक में कह देना।

२—अहो भगवान् ! नारकी में उत्पन्न होने वाला जीव नरक का आयुष्य क्या इस भव में वेदता है ? या नरक में उत्पन्न होती वक्त वेदता है या उत्पन्न होने के बाद वेदता है ? हे गौतम ! इस भव में नहीं वेदता किन्तु उत्पन्न होती वक्त और उत्पन्न होने के बाद वेदता है। (पहले भांगे में नहीं वेदता, दूसरे तीसरे भांगे में वेदता है) इसी तरह २४ दण्डक में कह देना।

अहो भगवान् ! नरक में उत्पन्न होने वाला जीव क्या इस भव में रहा हुआ महावेदना वाला होता है ? या नरक में उत्पन्न होते समय महावेदना वाला होता है ? या नरक में उत्पन्न होने के बाद महावेदना वाला होता है ? हे गौतम ! इस भव में रहा हुआ कदाचित् महावेदना वाला होता है, कदाचित् अल्प वेदना वाला होता है, नरक में उत्पन्न होते समय कदाचित् महावेदना वाला होता है कदाचित् अल्प वेदना वाला होता है, नरक में उत्पन्न होने के बाद एकान्त दुःख वेदना वेदता है, कदाचित् किंचित् सुख वेदना वेदता है। देवता में पहले दूसरे भांगे में कदाचित् महावेदना वाला कदाचित् अल्प वेदना वाला होता है परन्तु देवता में उत्पन्न होने के बाद एकान्त साता वेदना वेदता है किन्तु किंचित्

असाता वेदना भी वेदता है। दस दण्डक औदारिक के जीव पहले दूसरे भांगे में कदाचित् महा वेदना वेदते हैं कदाचित अल्प वेदना वेदते हैं उत्पन्न होने के बाद वेमाया (विविध प्रकार से) वेदना वेदते हैं।

३—अहो भगवान् ! क्या जीव आभोग (जाणपणा) से आयुष्य बांधता है या अनाभोग (अजाणपणा) से आयुष्य बांधता है ? हे गौतम ! जीव अनाभोग से आयुष्य बांधता है। इसी तरह २४ ही दण्डक में कह देना चाहिए।

४—अहो भगवान् ! क्या जीव कर्कश वेदनीय (दुःख से वेदने योग्य) कर्म बांधता है ? हाँ, गौतम ! बांधता है अहो भगवान् ! इसका क्या कारण ! हे गौतम ! १८ पाप करने से जीव कर्कश वेदनीय कर्म बांधता है। इसी तरह २४ ही दण्डक में कह देना चाहिए।

५—अहो भगवान् ! क्या जीव अकर्कश वेदनीय (सुख पूर्वक वेदने योग्य) कर्म बांधता है ? हाँ, गौतम ! बांधता है अहो भगवान् ! इसका क्या कारण ? हे गौतम ! १८ पाप का त्याग करने से जीव अकर्कश वेदनीय कर्म बांधता है। इसी तरह मनुष्य में कह देना। शेष २३ दण्डक के जीव अकर्कश वेदनीय कर्म नहीं बांधते हैं।

६—अहो भगवान् ! क्या जीव सातावेदनीय कर्म बांधता है ? हाँ, गौतम ! बांधता है। अहो भगवान् ! जीव सात

वेदनीय कर्म किस तरह से बांधता है? हे गौतम! जीव साता वेदनीय कर्म* १० प्रकार से बांधता है। इसी तरह २४ ही दण्डक में कह देना चाहिए।

७—अहो भगवान्! क्या जीव असाता वेदनीय कर्म बांधता है? हाँ, गौतम! बांधता है। अहो भगवान्! जीव असाता वेदनीय कर्म किस तरह से बांधता है? हे गौतम! जीव ×१२ प्रकार से असाता वेदनीय कर्म बांधता है। इसी तरह २४ ही दण्डक में कह देना चाहिए।

८—अहो भगवान्! इस जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में इस अवसर्पिणी काल का दुःषमा-दुःषम नाम का छठा आरा कैसा होगा? हे गौतम! यह छठा आरा मनुष्य पशु पक्षियों के दुःख जनित हाहाकार शब्द से व्याप्त होगा। इस आरे के प्रारंभ

---

*साता वेदनीय कर्म बन्ध के दस कारणः—

१-४-प्राण, भूत, जीव, सत्त्वों पर अनुकम्पा करने से, ५-बहुत प्राण भूत जीव सत्त्वों को दुःख नहीं देने से, ६-उन्हें शोक नहीं उपजाने से, ७-खेद नहीं उपजाने से, ८-वेदना नहीं उपजाने से, ९-नहीं मारने से, १०-परिताप नहीं उपजाने से जीव साता वेदनीय कर्म बांधता है।

× असातावेदनीय कर्म बांधने के १२ कारण—

१-दूसरे जीवों को दुःख देने से, २-शोक उपजाने से, ३-खेद उपजाने से, ४-पीड़ा पहुंचाने से, ५-मारने से, ६-परिताप उपजाने से, ७-१२-बहुत प्राण, भूत, जीव, सत्त्वों को दुःख देने से, शोक उपजाने से, खेद उपजाने से, पीड़ा पहुंचाने से, मारने से, परिताप उपजाने से, जीव असाता वेदनीय कर्म बांधता है।

में धूलि युक्त भयंकर आंधी चलेगी, फिर संवर्तक हवा चलेगी, दिशाएं धूल से भर जाएंगी, प्रकाश रहित होंगी, अरस विरस क्षार खात अग्नि बिजली विष मिश्रित बरसात होगी। वनस्पतियाँ, ×त्रसप्राणी पर्वत नगर सब नष्ट हो जाएंगे। पर्वतों में एक वैताढ्य पर्वत और नदियों में गंगा सिन्धु नदी रहेगी। सूर्य खूब तपेगा, चन्द्रमा अत्यन्त शीतल होवेगा। भूमि अंगार, भोभर, राख तथा तपे हुए तवे के समान होगी। गंगा सिन्धु नदियों का पाट रथ के चीले जितना चौड़ा रहेगा। उसमें रथ की धुरी प्रमाण पानी रहेगा। उसमें मच्छ कच्छ आदि जलचर जीव बहुत होंगे। गंगा सिंधु महानदियों के पूर्व पश्चिम तट पर *७२ बिल हैं। उनमें मनुष्य रहेंगे। वे मनुष्य खराब

× बिलों और गंगा सिन्धु नदी के सिवा गांव और जंगल में चलने वाले त्रस प्राणी।

* वैताढ्य पर्वत के इस तरफ दक्षिण भरत में ९ बिल पूर्व के तट पर हैं और ९ बिल पश्चिम के तट पर हैं। इसी तरह १८ बिल वैताढ्य पर्वत के उत्तर की तरफ उत्तर भरत में हैं। ये ३६ बिल गंगा नदी के तट पर वैताढ्य पर्वत के पास हैं। ऐसे ही ३६ बिल सिंधु नदी के तट पर वैताढ्य पर्वत के पास हैं। इन ७२ बिलों में से ६३ बिलों में मनुष्य मनुष्यणी रहेंगे। ६ बिलों में चौपद पशु रहेंगे और बाकी ३ बिलों में पक्षी रहेंगे। मनुष्य मच्छ कच्छप का आहार करेंगे। पशु पक्षी उन मच्छ कच्छप आदि की हड्डियां आदि चाट कर रहेंगे। मनुष्यों के शरीर की रचना इस प्रकार होगी—घड़े के पींदा (नीचे का भाग) समान शिर होगा, जौ के शालू के समान माथे के केश होंगे, कढ़ाई के ... के समान ललाट होगा, चीड़ी के पांखों के समान भाँफण होंगे,

रूप वाले, दीन हीन अनिष्ट अमनोज्ञ स्वर वाले, काले कुरूप होंगे। उनकी उत्कृष्ट अवगाहना लगते आरे १ हाथ की उतरते आरे मुण्ड हाथ (१ हाथ से कुछ कम) प्रमाण होगी और आयु लगते आरे २० वर्ष की उतरते आरे १६ वर्ष की होगी। वे अधिक सन्तान वाले होंगे। उनका वर्ण, गंध, रस, स्पर्श, संहनन, संस्थान सब अशुभ होंगे। वे बहुत रोगी, क्रोधी मानी मायी लोभी होंगे। वे लोग सूर्य उदय और अस्त के समय अपने बिलों में से बाहर निकल कर गंगा सिंधु नदियों में से मच्छ कच्छप पकड़ कर रेत में गाड़ देंगे। शाम को गाड़े हुए मच्छादि को सुबह निकाल कर खावेंगे और सुबह गाड़े हुए मच्छादि को शाम को निकाल कर खावेंगे। व्रत, नियम पच्चक्खाण से रहित मांसाहारी संक्लिष्ट परिणामी (खराब परिणाम वाले) वे जीव मर कर प्रायः नरक तिर्यंच गति में जावेंगे। पशु पक्षी भी मर कर प्रायः नरक तिर्यंच गति में जावेंगे।

यह आरा इक्कीस हजार वर्ष का होगा।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

बकरे की नाक के समान नाक होगी ऊंट की नौल के समान होठ होंगे सीप संखोलिया के समान नख होंगे। उदई की बम्बी के समान शरीर होगा नाक कान आदि सब ही द्वार बहते रहेंगे। वे माता पिता की लज्जा से रहित होंगे।

(थोकड़ा नं० ६४)

श्री भगवतीजी सूत्र के सातवें शतक के सातवें उद्देशे में 'काम भोगादि' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! उपयोग सहित गमनागमनादि क्रिया करते हुए संवुडा (संवर युक्त) अणगार को इरियावही (ऐर्यापथिकी) क्रिया लगती है या सांपरायिकी क्रिया लगती है ? हे गौतम ! अकषायी संवुडा अणगार सूत्र प्रमाणे चलता है, इसलिए उसे इरियावही क्रिया लगती है, सांपरायिकी क्रिया नहीं लगती । कषायसहित, उत्सूत्र चलने वाले अणगार को सांपरायिकी क्रिया लगती है।

२—अहो भगवान् ! काम कितने प्रकार के हैं ? हे गौतम ! काम दो प्रकार के हैं—शब्द और रूप । अहो भग-भगवान् ! काम रूपी है या अरूपी ? सचित्त है या अचित्त ? जीव है या अजीव ? हे गौतम ! काम रूपी है, अरूपी नहीं । काम सचित्त भी है और अचित्त भी है, काम जीव भी है और अजीव भी है । अहो भगवान् ! काम जीवों के होते हैं या अजीवों के होते हैं ? हे गौतम ! काम जीवों के होते हैं, अजीवों के नहीं होते ।

३—अहो भगवान् ! भोग कितने प्रकार के हैं ? हे गौतम ! भोग तीन प्रकार के हैं—गंध, रस, स्पर्श । अहो भगवान् ! भोग रूपी हैं या अरूपी ? सचित्त हैं या अचित्त ?

जीव हैं या अजीव ? हे गौतम ! भोग रूपी हैं, अरूपी नहीं। भोग सचित्त भी हैं और अचित्त भी हैं। भोग जीव भी हैं और अजीव भी हैं। अहो भगवान् ! भोग जीवों के होते हैं या अजीवों के होते हैं ? हे गौतम ! भोग जीवों के होते हैं, अजीवों के नहीं होते।

४—अहो भगवान् ! नारकी के नेरीये कामी हैं या भोगी हैं ? हे गौतम ! कामी भी हैं और भोगी भी हैं। अहो भगवान् इसका क्या कारण ? हे गौतम ! श्रोत्रेन्द्रिय चक्षुइन्द्रिय आसरी कामी हैं और घ्राणेन्द्रिय रसेन्द्रिय स्पर्शेन्द्रिय आसरी भोगी हैं। इसी तरह भवनपति वाणव्यंतर, ज्योतिषी, वैमानिक, तिर्यंच पंचेंद्रिय और मनुष्य ये १५ दण्डक कह देना। चौइन्द्रिय चक्षु-इन्द्रिय आसरी कामी हैं, घ्राणेन्द्रिय रसेन्द्रिय स्पर्शेन्द्रिय आसरी भोगी हैं। तेइन्द्रिय, बेइद्रिंय और एकेन्द्रिय (पांच स्थावर) भोगी हैं, कामी नहीं।

अल्प बहुत्व—सबसे थोड़े कामी भोगी, उससे नोकामी नो भोगी अनंतगुणा, उससे भोगी अनंतगुणा।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ६५)

श्री भगवतीजी सूत्र के सातवें शतक के सातवें उदेशे में 'अनगार क्रिया' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! किसी भी देवलोक में उत्पन्न होने योग्य क्षीण भोगी (दुर्बल शरीर वाला) छद्मस्थ मनुष्य क्या उत्थान, कर्म, बल, वीर्य, पुरुषकार, पराक्रम द्वारा विपुल भोग (मनोज्ञ शब्दादि) भोगने में समर्थ नहीं होता। अहो भगवान् ! क्या आप इस अर्थ को ऐसा ही कहते हैं* ? हे गौतम ! णो इणट्ठे समट्ठे (यह अर्थ ठीक नहीं है)। अहो भगवान् ! इसका क्या कारण है ? हे गौतम ! वह उत्थान कर्म बल वीर्य पुरुषकार पराक्रम से कोई भी विपुल भोग (मनोज्ञ शब्दादि) भोगने में समर्थ है। इसलिए वह भोगी पुरुष भोगों का त्याग पच्चक्खाण करने से महा निर्जरा वाला और महा पर्यवसान (महाफल) वाला होता है।

२—जिस तरह छद्मस्थ का कहा उसी तरह अधो अवधिज्ञानी (नियत क्षेत्र का अवधि ज्ञान वाला) का भी कह देना चाहिए।

६—अहो भगवान् ! उसी भव में सिद्ध होने योग्य यावत् सर्व दुःखों का अन्त करने योग्य क्षीणभोगी (दुर्बल शरीर वाला) परम अवधिज्ञानी मनुष्य क्या उत्थान कर्म बल वीर्य पुरुषकार पराक्रम से विपुल भोग भोगने में समर्थ नहीं है ?

* इस प्रश्न का आशय यह है कि जो भोग भोगने में समर्थ नहीं है, वह अभोगी है किन्तु अभोगी होने मात्र से ही त्यागी नहीं हो सकता। त्याग करने से त्यागी होता है और त्याग करने से ही निर्जरा होती है।

हे गौतम ! णो इणट्ठे समट्ठे—वह उत्थानादि से साधु के योग्य विपुल भोग भोगने में समर्थ है। भोगों का त्याग पच्चक्खाण करने से वह महानिर्जरा और महा पर्यवसान (महा फल) वाला होता है।

४—जिस तरह परमावधिज्ञानी का कहा उसी तरह से केवलज्ञानी का कह देना चाहिये।

अहो भगवान् ! क्या ÷ असंज्ञी (मन रहित) त्रस और पांच स्थावर अज्ञानी अज्ञानके अन्धकार में डूबे हुए अज्ञान रूपी मोह जाल में फंसे हुए अकाम निकरण (अनिच्छा पूर्वक) वेदना वेदते हैं ? हाँ, गौतम ! वेदते हैं।

* अहो भगवान् ! क्या संज्ञी (मन सहित) जीव अकाम निकरण वेदना वेदते हैं ? हाँ, गौतम ! वेदते हैं। अहो भगवान् !

÷ जो जीव असंज्ञी (मन रहित) हैं उनके मन नहीं होनेसे इच्छा शक्ति और ज्ञान शक्ति के अभावसे क्या अकामनिकरण (अनिच्छा-पूर्वक) अज्ञान पणे वेदना-सुख दुःखका अनुभव करते हैं ? इस प्रश्न का यह भावार्थ है। इसका उत्तर—हाँ अनुभव करते हैं इस तरह दिया है।

* अहो भगवान् ! जो जीव इच्छा शक्ति युक्त और संज्ञी (मनसहित-समर्थ) है क्या वह भी अनिच्छापूर्वक अज्ञान पणे से सुख दुःख का अनुभव करते हैं ? हाँ गौतम ! करते हैं। अहो भगवान् ! इसका क्या कारण ? हे गौतम ! जैसे कोई पुरुष देखने की शक्ति से युक्त है तो भी वह पुरुष दीपक के बिना अन्धकार में रहे हुए पदार्थों को नहीं देख सकता तथा उपयोग बिना ऊंचे नीचे और पीठ पीछे के पदार्थों को नहीं

इसका क्या कारण ? हे गौतम ! जैसे—अन्धकार में दीपक वि
आंखों से देखा नहीं जा सकता। छहों दिशाओं में दृष्टि फै
कर देखे बिना रूप देखा नहीं जा सकता। इस कारण से
अकाम निकरण वेदना वेदते हैं।

७—× अहो भगवान् ! क्या संज्ञी (मन सहित) ज
प्रकाम (तीव्र इच्छा पूर्वक) वेदना वेदते हैं ? हाँ, गौतम
वेदते हैं। अहो भगवान् ! इसका क्या कारण है ? हे गौतम
वे समुद्र पार नहीं जा सकते, समुद्र पार के रूपों को नहीं दे
सकते, देवलोक के रूपों को नहीं देख सकते, इस कारण से
प्रकाम (तीव्र इच्छा पूर्वक) वेदना वेदते हैं।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

देख सकता है। वे इच्छा शक्ति और ज्ञानशक्ति युक्त होते हुए भी उपय
बिना सुख दुःख का अनुभव करते हैं। जिस प्रकार असंज्ञी जीव इ
और ज्ञान शक्ति रहित होने से अनिच्छापणे और अज्ञान दशा में सु
दुःख वेदते हैं उसी तरह से संज्ञी जीव इच्छा और ज्ञानशक्ति होते
भी शक्ति की प्रवृत्ति के अभाव में तीव्र अभिलाषा के कारण अनि
पूर्वक सुख दुःख वेदते हैं।

× अहो भगवान् ! क्या संज्ञी (मन सहित) जीव प्रकाम निकर
तीव्र अभिलाषा पूर्वक सुख दुःख वेदते हैं ? हाँ, गौतम ! वेदते
अहो भगवान् ! किस तरह वेदते हैं ? हे गौतम ! जो समुद्र के
नहीं जा सकते, समुद्र के पार रहे हुए रूपों को नहीं देख सकते, वे त
अभिलाषा पूर्वक सुख दुःख वेदते हैं। वे इच्छाशक्ति और ज्ञानशक्ति

(थोकड़ा नं० ६६)

श्री भगवतीजी सूत्र के सातवें शतक के आठवें उद्देशे में 'छद्मस्थ अवधिज्ञानी' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! गत अनन्त काल में क्या छद्मस्थ मनुष्य सिर्फ तप संयम, संवर ब्रह्मचर्य और आठ प्रवचन माता के पालने से सिद्ध बुद्ध मुक्त हुआ है ? हे गौतम ! णो इणट्ठे समट्ठे (ऐसा नहीं हुआ)। अहो भगवान् ! इसका क्या कारण ? हे गौतम ! गत अनन्त काल में जो सिद्ध बुद्ध मुक्त हुए हैं वे सब उत्पन्न ज्ञान दर्शन के धारक अरिहंत जिन केवली होकर सिद्ध बुद्ध मुक्त हुए हैं, होते हैं और होवेंगे। जिस तरह छद्मस्थ का कहा उसी तरह अधोअवधिक और परम अधोअवधिक का भी कह देना चाहिए।

२—अहो भगवान् ! गत अनन्त काल में क्या केवली मनुष्य सिद्ध बुद्ध मुक्त हुए हैं ? हाँ, गौतम ! हुए हैं, वर्तमान काल में होते हैं और भविष्य काल में होवेंगे।

लाषा है। इसलिये वे सुख दुःख को वेदते हैं। असंज्ञी जीव इच्छा और ज्ञानशक्ति के अभाव से अनिच्छा और अज्ञान पूर्वक सुख दुःख वेदते हैं। संज्ञी जीव इच्छा और ज्ञानशक्ति युक्त होते हुए भी उपयोग के अभाव से अनिच्छा और अज्ञान पूर्वक सुख दुःख वेदते हैं तथा [illegible] जीव समर्थ और इच्छा युक्त होते हुए भी प्राप्त करने की शक्ति [illegible] के अभाव से सिर्फ तीव्र अभिलाषा पूर्वक सुख दुःख वेदते हैं।

३—अहो भगवान् ! गत अनन्त काल में, वर्तमान काल में और भविष्यत काल में जितने सिद्ध बुद्ध मुक्त हुए हैं, होते हैं, होवेंगे क्या वे सभी उत्पन्न ज्ञान दर्शन के धारक अरिहंत जिन केवली होकर सिद्ध बुद्ध मुक्त हुए हैं होते हैं और होवेंगे ? हाँ, गौतम ! वे सब उत्पन्न ज्ञान दर्शन के धारक अरिहंत जिन केवली होकर सिद्ध बुद्ध मुक्त हुए हैं, होते हैं, होवेंगे।

४—अहो भगवान् ! क्या उन उत्पन्न ज्ञान दर्शन के धारक अरिहंत जिन केवली को 'अलमत्थु' (अलमस्तु-पूर्ण) कहना चाहिए ? हाँ, गौतम ! उन्हें अलमत्थु (अलमस्तु)-पूर्ण कहना चाहिए।

५—अहो भगवान् ! क्या हाथी और कुंथुआ का जीव समान है ? हाँ, गौतम ! * दीपक के दृष्टान्त अनुसार समान है, सिर्फ शरीर का फर्क है।

नारकी के नेरीये यावत् वैमानिक तक २४ ही दण्डक के जीव जो पापकर्म करते हैं, किये हैं और करेंगे वे सब दुःख रूप

---

*जैसे एक दीपक का प्रकाश किसी एक कमरे में फैला हुआ है। यदि उसको किसी बर्तन द्वारा ढक दिया जाय तो उसका प्रकाश बर्तन परिमाण हो जाता है ! इसी तरह जब जीव हाथी का शरीर धारण करता है तो उतने बड़े शरीर में व्याप्त रहता है और जब कुंथुआ का शरीर धारण करता है तो उस छोटे शरीर में व्याप्त रहता है। इस प्रकार सिर्फ शरीर में फर्क रहता है। जीव में कुछ भी फर्क नहीं है। सब जीव समान हैं।

वैक्रिय कर सकता है ? हे गौतम ! नहीं कर सकता, किंतु बाहर के पुद्गलों को ग्रहण करके १ एक वर्ण एक रूप, २ एक वर्ण अनेक रूप, ३ अनेक वर्ण एक रूप, ४ अनेक वर्ण अनेक रूप वैक्रिय कर सकता है।

२—अहो भगवान् ! क्या वैक्रिय लब्धिवंत असंवुडा अणगार बाहर के पुद्गलों को ग्रहण किये बिना काले को नीला रूप और नीले को काला रूप परिणमा सकता है ? हे गौतम ! नहीं परिणमा सकता, किन्तु बाहर के पुद्गल ग्रहण करके काले को नीला और नीले को काला परिणमा सकता है। इस तरह वर्ण के १०, गन्ध का १, रस के १० और स्पर्श के ४ ये २५ भांगे हुए। ४ भांगे पहले के मिला कर कुल २९ भांगे हुए।

३—अहो भगवान् ! चेड़ा कोणिक के महाशिला कंटक संग्राम में और रथमूसल संग्राम में कितने मनुष्य मरे और वे कहाँ जाकर उत्पन्न हुए ? हे गौतम ! महाशिला कंटक संग्राम में ८४ लाख मनुष्य मरे, वे सब नरक तिर्यञ्च में उत्पन्न हुए। रथ-मूसल संग्राम में ९६ लाख मनुष्य मरे, उनमें से एक वरुण नाग नत्तुआ का जीव सौधर्म देवलोक के अरुणाभ विमान में महर्द्धिक देवपने उत्पन्न हुआ। और एक (वरुण नाग नत्तुआ के बाल मित्र का जीव *) उत्तम मनुष्यकुल में उत्पन्न हुआ। दस

* वरुण नाग नत्तुआ का जीव और वरुण नाग नत्तुए के बाल मित्र का जीव फिर महाविदेह क्षेत्र में जन्म लेकर मोक्ष जायेंगे।

हजार जीव एक मछली के पेट में उत्पन्न हुए। बाकी प्रायः सब जीव नरक तिर्यंच में उत्पन्न हुए।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ६८)

श्री भगवतीजी सूत्र के सातवें शतक के दसवें उद्देशे में 'अन्यतीर्थी' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

राजगृह नगर के बाहर *बहुत अन्यतीर्थी रहते हैं। उनमें से कालोदायी भगवान् के पास आया और भगवान से पञ्चास्तिकाय के विषय में प्रश्न पूछा। भगवान ने फरमाया कि हे कालोदायी ! पांच अस्तिकाय हैं—धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय। इन में से जीवास्तिकाय जीव है, बाकी ४ अजीव हैं। इनमें से पुद्गलास्तिकाय रूपी है, बाकी ४ अरूपी हैं धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, ये अजीव अरूपी है इन पर कोई खड़ा रहने में, सोने में बैठने में समर्थ नहीं है। पुद्गलास्तिकाय अजीवरूपी है इस पर कोई भी खड़ा रह सकता है, सो सकता है, बैठ सकता है।

१—अहो भगवान् ! क्या अजीवकाय (धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय) को पाप-

* १ कालोदायी, २ शैलोदायी, ३ शैवालोदायी, ४ उदय, ५ नामोदय, ६ नर्मोदय, ७ अन्यपालक, ८ शैलपालक, ९ शंख पालक, १० स्ती, ११ गृहपति।

कर्म लगता है ? हे कालोदायी ! अजीवकाय को पापकर्म नहीं लगता है किंतु जीवास्तिकाय को पापकर्म लगता है।

भगवान् से प्रश्नोत्तर करके कालोदायी बोध को प्राप्त हुआ। खन्दक जी की तरह भगवान् के पास दीक्षा अङ्गीकार की, ग्यारह अङ्ग पढ़े।

किसी एक समय कालोदायी अणगार ने भगवान् से पूछा कि अहो भगवान् ! क्या जीवों को पापकर्म अशुभफल विपाक सहित होते हैं ? हाँ, कालोदायी ! जीवों को पापकर्म अशुभफल विपाक सहित होते हैं—जैसे विषमिश्रित भोजन करते समय तो मीठा लगता है किन्तु पीछे परिणमते समय दुःखरूप दुर्वर्णादि रूप होता है। इसी तरह १८ पापकर्म करते हुए तो जीव को अच्छा लगता है किंतु पाप के कड़वे फल भोगते समय जीव दुखी होता है।

अहो भगवान् ! क्या जीवों को शुभकर्म शुभफल वाले होते हैं ? हाँ, कालोदायी ! शुभकर्म शुभफल वाले होते हैं- जैसे कड़वी औषधि मिश्रित स्थाली पाक (मिट्टी के बर्तन में अच्छी तरह पकाया हुआ भोजन) खाते समय तो अच्छा नहीं लगता किन्तु पीछे परिणमते समय शरीर में सुखदायी होता है। इसी तरह १८ पाप त्यागते समय तो अच्छा नहीं लगता परन्तु पीछे जब शुभ कल्याणकारी पुण्यफल उदय में आता है तब बहुत सुखदायी होता है।

अहो भगवान् ! एक पुरुष अग्नि जलाता है और एक पुरुष अग्नि बुझाता है, इन दोनों में कौन महाकर्मी, महा क्रिया वाला महा आस्रवी महा वेदना वाला है और कौन अल्पकर्मी अल्प क्रिया वाला, अल्प आस्रवी अल्प वेदना वाला है ? हे कालोदायी ! जो पुरुष अग्नि जलाता है वह महाकर्मी यावत् महावेदना वाला है क्योंकि वह पांच काया (पृथ्वीकाय, अप्काय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, त्रसकाय) का महा आरम्भी है, एक तेउकाया का अल्प आरम्भी है। जो पुरुष अग्नि बुझाता है वह अल्पकर्मी यावत् अल्प वेदना वाला है क्योंकि वह पांच काया का अल्प आरम्भी है, एक तेउकाया का महा आरम्भी है, इसलिए अल्पकर्मी यावत् अल्प वेदना वाला है।

अहो भगवान् ! क्या अचित्त पुद्गल अवभास करते हैं, उद्योत करते हैं, तपते हैं, प्रकाश करते हैं ? हाँ, कालोदायी ! अचित्त पुद्गल अवभास करते हैं यावत् प्रकाश करते हैं। कोपायमान तेजोलेशी लब्धिवंत अणगार की तेजोलेश्या निकल कर नजदीक या दूर जहाँ जाकर गिरती है वहाँ वे अचित्त पुद्गल अवभास करते हैं यावत् प्रकाश करते हैं।

कालोदायी अणगार उपवास बेला तेला आदि तपस्या करते हुए केवलज्ञान केवलदर्शन उपार्जन कर सिद्ध बुद्ध यावत् मुक्त हुए।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

❀ समाप्त ❀